इनामदार

– अण्णाभाऊ साठे

(अण्णाभाऊ साठे का यह पूर्णकालिक नाटक है। इसे सबसे पहले इप्टा के भूतपूर्व अध्यक्ष ए.के. हंगल की पहल पर मुंबई इप्टा ने 1957 में हिंदी में प्रस्तुत किया था। इसके कुछ मंचन भी हुए थे। हंगल साहब ने इसमें इनामदार की मुख्य भूमिका निभाई थी। बाद में यह नाटक मराठी में प्रकाशित हुआ। यह उनका एकमात्र नाटक है, जिसमें कोई गीत नहीं है। इसमें ग्रामीण पात्र 'बोली' में बात करते हैं और शिक्षित पात्र 'भाषा' में। – अनुवादक)

अंक एक

(येलापूरकर गोपालराव देशमुख (इनामदार) का पुरानी शैली का बैठक का कमरा। बैठक के बीचोबीच आने–जाने का दरवाज़ा है, बाईं तरफ ऊपर जाने की सीढ़ी दिखाई देती है। सीढ़ी के पास ही गोपालराव के बैठने लिए तख़्त है, जिस पर बिछी गद्दी पर मसनद–तकिये, पान का डिब्बा आदि रखा है। पास में ही तिजोरी है। बैठक के पास ही रसोईघर है। उसके सामने, दूसरी विंग में एक और कमरा है। उसके पास मुनीम जी के बैठने के स्थान पर हिसाब–किताब की बहियाँ रखी हुई हैं। उसके पास ही स्याही की दवात और लेखनी रखी है। सामने दीवार पर विभिन्न देवी–देवताओं की तस्वीरें लटकी हैं। वहीं खूँटी पर एक बंदूक भी लटक रही है।)

(दर्शकों के सामने रंगमंच का परदा हटते ही धुआँ ही धुआँ दिखाई देता है। मुनीम जी धूपदान में धूप डालते हुए धुएँ को और गाढ़ा कर रहे हैं। इस वक्त मुनीम जी कमर पर सिर्फ एक गमछा लपेटे हुए हैं, बाकी बदन खुला है। उनके सिर पर कड़े बाल सीधे खड़े हुए दिखाई देते हैं। मंत्रोच्चार करते हुए वे देवी–देवताओं की तस्वीरों को धूप दिखाने में मगन हैं। शाम का समय है।

करीम का प्रवेश। ऊँचा, हट्टाकट्टा शरीर। सादा अंगरखा, सादी धोती और जैकेट पहना है। सिर का साफा बगल में दबा हुआ, दाहिने हाथ में लाठी और बाएँ हाथ में चप्पल थामे सहमते हुए भीतर आता है। उसकी मूँछें ऐंठी हुई हैं। मुनीम जी मंत्रोच्चार करते हुए ध्यान से उसके हाथ की चप्पलों को देखते हैं।)

मुनीम जी : (चप्पल की ओर इशारा करते हुए) करीम, ये ... ये क्या कर रहे हो? उसकी जगह बाहर है, उसे सिर पर नहीं रखना चाहिए।

करीम : (झिझकते हुए) जी, सही है, मगर...

मुनीम जी : तो उसे बाहर रखने की बजाय अंदर बैठक में क्यों लाया? पहले अपनी पादुका बाहर रखकर आ! अगर तू उसे इतना ही चाहता है तो तेरे मरने के बाद उसे मंदिर में रख देंगे। मगर अभी बाहर रख कर आ...।

करीम : बात तो ठीक है। मेरे मरने के बाद मंदिर में रख देंगे, मगर मेरे जीते–जी आपके कुत्ते के पेट में चली गईं तो मुझे नंगे पैर घूमना पड़ेगा! कल ही उसने मेरा नया जूता काट डाला है। क्या करूँ? मालिक का कुत्ता है इसलिए चुप रह गया, नहीं तो लात मारकर उसकी कमर ही तोड़ देता!

मुनीम जी : अरे, तो जाकर आले में रख दे, जा जल्दी...!

(करीम चप्पल रखने जाता है। मुनीम जी भीतर के कमरे में जाते हैं। उसी समय कुत्ते के भौंकने की आवाज़ आती है। करीम भागते हुए आता है और कंबल बिछाकर बैठ जाता है।

मुनीम जी जल्दी–जल्दी बंडी पहन कर आता है। अपने स्थान पर बैठता है। खाता–बही को प्रणाम करता है। लेखनी कान पर खोंस लेता है...)

मुनीम जी : हाँ, तो कितने गाँव की उगाही वसूल कर लाया है?

करीम : (जेब से पैसा निकालते हुए) तीन गाँव का मिल पाया...!

मुनीम जी : कितना?

करीम : कुल तीस रूपिया! जी!

मुनीम जी : अच्छा! बढ़िया है! ठीक है... तीन आने प्रति दिन के अनुसार तीन गाँवों की वसूली... वह भी तीन दिन में... और महज़ तीस रूपये! छोड़, बोलना बेकार है!

करीम : क्यों? बोलिये न! बोलने के पैसे नहीं लगते!

मुनीम जी : कहना क्या चाहता है? मेरी ज़बान पर लगाम नहीं है?

करीम : नहीं नहीं, ऐसा कहाँ कह रहा हूँ मैं? किसानों से वसूली करना कितना मुश्किल होता है, आप को क्या मालूम! और सच कहूँ, तो पैसा कमाने में जितनी मेहनत नहीं लगती, उससे ज़्यादा वसूली में लगती है!

मुनीम जी : (चौंककर) मतलब? ... क्या कहना चाहता है तू?

करीम : मैं कहना चाहता हूँ कि, हम दो ही तो पटेल हैं, और बहत्तर गाँवों का जिम्मा हमारे ऊपर है! किसानों के घर जाते हैं तो वे अपना रोना रोते हैं! हम मदारी के भालू की तरह दर–दर की ठोकरें खाते फिरते हैं और यहाँ आने पर आप हमें चमकाते हैं!

मुनीम जी : ए ऽ सरकार आ रहे होंगे। तेरा ये दुखड़ा रोना बंद कर!

करीम : ठीक है! आप क्या समझेंगे; जिसके पैर न फटी बिवाई, वो क्या जाने पीर पराई!

मुनीम जी : (ऊँची आवाज़ में) करीम! अब पैसे निकाल चुपचाप और किसानों के नाम बता! (बाहर किसी के आने की आहट होती है, कदमों की आवाज़ पहचानने की कोशिश करते हुए) ठीक से बैठ! लगता है, सरकार आ गए!

करीम : (हड़बड़ाते हुए) सरकार कहीं गए हैं?

(दौलती नाम का बहरा बूढ़ा नौकर हाथ में पान का थाल लेकर धीमी गति से प्रवेश करता है। उसने छोटी–सी बंडी और सिर पर गमछा बाँधा है। उसने घुटने तक की छोटी धोती पहनी है। उसकी मूँछें खिचड़ी परंतु लम्बी हैं। वह दोनों को बिना देखे थाल रखता है। मुनीम जी उसे देखकर जानबूझकर एक बही पटकते हैं।)

मुनीम जी : हाँ बोल, ... किसानों के नाम!

करीम : पहले ये पैसे रखिये। (जेब से पैसे निकालकर देते हुए) और नाम लिखिये : पांडू पाटील, परुंबडं, दस रूपये, (मुनीम जी लिखता है) बनाबाई मुलकिन, टालगाँव, दस रूपये, मुखल पिंजारी, घामवाड, दस रूपये। बस! पैसे गिन लीजिये।

(मुनीम पैसे गिनकर बही हटाता है। सोचता है।)

मुनीम जी : अरे हाँ! लटकाबाड़ी के उस लक्खू लटके को भी तगादा करने के लिए तुझे कहा था न? (दौलती की ओर देखकर) ए ऽ दौलतराव, सरकार कब आने वाले हैं?

दौलती : (कान पर हाथ धरकर) आँय! क्या कहा?

करीम : (ज़ोर से) सरकार कब आने वाले हैं?

दौलती : (गंभीर मुद्रा) राम जाने! (धीमी चाल से लौट जाता है।)

करीम : भगवान भले ही नाक न दे, मगर कान देने में उसे कोताही नहीं करनी चाहिए। कान है तो आदमी है। वरना...

मुनीम जी : मगर वे तेरे कान जैसे नहीं होने चाहिए ... लम्बे...!

करीम : (अपने कान टटोलकर देखते हुए) गधे जैसे?

मुनीम जी : लखू लटके को तगादा किया या नहीं, ये बता! बड़ा आया कानवाला!

करीम : हाँ, किया...

मुनीम जी : तो उसने क्या कहा?

करीम : वह कह रहा था कि बैल बिकते ही सारा बकाया चुका देगा; थोड़ा सब्र करो!

मुनीम जी : अरे, मगर उसका बैल कब बिकेगा?

करीम : (चिलम में तंबाकू भरते हुए) जब वह बाजार ले जाएगा!

मुनीम जी : (आश्चर्य से) कब ले जाने वाला है?

करीम : (चिलम का सुट्टा लगाकर धुआँ छोड़ते हुए) जब वह चलने लगेगा!

मुनीम जी : (भड़कते हुए) बैल चलने लगेगा? अरे, मगर वह चलेगा कब?

करीम : (धुआँ भीतर खींचकर) जब उसे चारा मिलेगा!

मुनीम जी : (भड़ककर) करीम, क्या बक रहा है? चारा मिलने पर बैल चलेगा? मतलब, जब बारिश होगी, तो चारा उगेगा, तब बैल चारा खाएगा, फिर उसे बाजार ले जाएगा! अरे करीम, कुछ तो सच बोला कर, और...

करीम : (आराम से) सच तो कह रहा हूँ, भगवान की कसम!

मुनीम जी : (चिढ़कर) तेरा सिर! पहले तो यह बता कि तू तंबाकू पी रहा है या गांजा?

करीम : क्या बताऊँ?

मुनीम जी : और ये भी बता कि मैं आदमी हूँ या धोबी का गधा? बोल...

करीम : नहीं नहीं, मैं आपको गधा कैसे कह सकता हूँ?

मुनीम जी : (नकल उतारते हुए) हाँ हाँ, कैसे कह सकता हूँ? मेरी पूँछ नहीं है, लंबे कान नहीं है। है न? मूर्ख कहीं का! (आँखें दिखाते हुए) देख, कल ही उस लक्खू लटके को यहाँ हाजिर कर। कैसे लोग हैं ये! अगर ये कर्ज वापस नहीं कर सकते, तो लेते ही क्यों हैं? अगर लेते हैं तो वापस करना चाहिए।

करीम : मैं एक बात पूछूँ? आप लोग इन लोगों को कर्ज देते ही क्यों हैं?

मुनीम जी : क्यों मतलब? भला यह कोई सवाल हुआ? अरे, उन किसानों को ज़रूरत होती है इसलिए देते हैं! ... तू क्या सोचता है कि हमारे पास पैसे रखने की जगह नहीं है इसलिए देते हैं?

करीम : (व्यंग्य से) किसानों को ज़रूरत तो होती ही है! फिर भी आप देते ही क्यों हैं?

मुनीम जी : अरे क्यों–क्यों क्या लगा रखा है? तू ही बता, किसान को कर्ज क्यों लेना चाहिए?

(फिर से बाहर कदमों की आहट सुनाई देती है। दोनों चौंकते हैं, दरवाज़े की ओर देखते हुए खड़े हो जाते हैं। फिर से दौलती का धीमी चाल से प्रवेश। वह बंदूक पोंछने लगता है। मुनीम जी और करीम झुँझलाकर फिर बैठ जाते हैं।)

करीम : क्यों दौलूदादा, तेरा बकरा फिर से खेत में घुस गया!

दौलती : (गर्दन मोड़कर) किसके?

करीम : पांडू नाई के! वो बदमाश नाई एकदम जल–भुन गया है...

मुनीम जी : ए सयाने! तू इधर ध्यान दे। क्या तू ये कहना चाहता है कि कर्जा लेने वाले के साथ–साथ कर्जा देने वाला भी ज़रूरतमंद होता है?

करीम : भगवान कसम, यही सच है।

मुनीम जी : सच है, क्या सच है? सुन; अरे जिसके पास पैसा होता है, वह उसको देता है, जिसके पास नहीं होता! तो मतलब क्या हुआ, कि जिसे ज़रूरत होती है, उसे देता है। इसलिए लेने वाला ही ज़रूरतमंद होता है! समझ में आया?

करीम : नहीं! मगर कर्जा देने वाला देता ही क्यों है?

मुनीम जी : ठीक है, चल तू ही बता...क्यों देता है?

करीम : दोनों ही ज़रूरतमंद होते हैं! एक, करजे का मालिक और एक ब्याज का!

मुनीम जी : पागल है तू करीम! बता तो, ब्याज का और करजे का क्या संबंध है?

करीम : बताऊँ? मगर पहले आप बताइये, हम भैंस को दाना क्यों खिलाते हैं?

मुनीम जी : दूध ज़्यादा देगी इसलिए...

करीम : बस, यही बात ब्याज पर भी लागू होती है।

मुनीम जी : कैसे?

करीम : पहले किसान को कर्ज का दाना खिलाया जाता है, फिर बारहों महीने ब्याज का दूध निकाला जाता है! अगर वह नहीं देता, तो तगादे का झटका देकर कोर्ट में मारा जाता है। ये सब–कुछ भैंस जैसा ही तो है!

मुनीम जी : सच है! मगर तेरी यह बात बाँझ भैंस पर लागू होती है इसलिए अब तू अपनी ये रामकहानी बंद कर। मालिक आ ही रहे होंगे! देख आ गए! (खड़ा होता है।)

(गोपालराव देशमुख का प्रवेश। उसने मलमल का कुरता, धोती तथा सिर पर भारी साफा पहना है। हाथ में लाठी है। घनी भौंहें, मोटी मूँछें हैं। मुनीम जी की ओर देख कर)

गोपालराव : क्यों मुनीम जी, सब ठीकठाक है न?

मुनीम जी : (नम्रता से) जी, सब ठीक है।

गोपालराव : ठीक! और करीम, वसूली का क्या हुआ?

करीम : (नम्रता से) जी, लाया हूँ। (दौलती बाहर जाता है)

मुनीम जी : मैंने जमा कर लिया है! और मालिक, काशी से माईसाहेब का पत्र आया है।

गोपालराव : (खुशी से) अच्छा! तो पढ़िये न! क्या लिखा है उन्होंने?

(मुनीम दौड़कर अपने बस्ते में से पत्र लाता है और पहले जहाँ खड़ा था, वहीं आकर पत्र पढ़ने लगता है।)

मुनीम जी : (पढ़ते हुए) श्रीमंत राजे, सादर चरण स्पर्श। पत्र लिखने का कारण यह है कि, मैं यहाँ खुश हूँ, चिंता करने की आवश्यकता नहीं है। कल ही मैं भिड़े परिवार के साथ मथुरा से काशी आई हूँ। मुझे यहाँ सब अच्छा लग रहा है मगर मेरा जी नहीं लगता। निरंतर आपकी याद आती है। (गोपालराव सिर हिलाते हैं) दूसरी बात, मुझे अब पैसे की ज़रूरत है। भेजने का प्रबंध कीजियेगा। येलापूर में सम्हलकर रहियेगा। रात में बाहर मत निकलियेगा। आपके दुश्मन हर जगह पर मौजूद हैं, इस अहसास से मेरा मन घबरा उठता है। इसलिए आप कम से कम मेरे लिए अपना ध्यान रखियेगा। जल्दी जवाब दीजियेगा। मैं प्रतीक्षा कर रही हूँ। आपकी तारा...

गोपालराव : (लंबी साँस भरकर) तो मुनीम जी, कल ही पैसे भिजवा दीजियेगा! यहाँ रखे–रखे उनका पेड़ नहीं उगेगा। रवाना कीजिये ताकि किसी अच्छे काम में प्रयुक्त हों। उन्हें लिखिये कि, काशी में कोई ठोस काम करवाएँ! कोई घाट या कोई मंदिर बनवाएँ ताकि बड़ा काम दिखाई दे! मैं भी लिखता हूँ।

मुनीम जी : मगर मालिक, वे कितने दिन काशी में रहेंगी? उन्हें बुलवा लीजिये न!

गोपालराव : कैसे बुला लूँ? मुनीम जी, स्त्रियों को बच्चे चाहिए। मेरी इस उम्र में, मेरी सम्पत्ति का कोई वारिस नहीं है! इन दो हवेलियों के लिए अभी तक किसी वारिस ने जन्म नहीं लिया है! इसलिए उन्हें उम्मीद है कि, काशी विश्वेश्वर प्रसन्न होकर उनके आँचल में पुत्ररत्न डालेंगे! इस जायदाद को वारिसान मिलेगा! लोग उसे सरकार कहकर पुकारेंगे! वह बड़ा होकर मेरी... गोपालराव की, मेरे महान वंश की पवित्र परम्परा को आगे बढ़ाएगा! इसीलिए वे इस उम्र में, महज़ बीस वर्ष की आयु में इस तरह यहाँ–वहाँ भटक रही हैं। मनुष्य किस तरह नियति के हाथों का खिलौना बन जाता है!

मुनीम जी : जी, मैं कल ही नकद भिजवाने की व्यवस्था करता हूँ।

गोपालराव : ठीक है! और करीम, तू जाकर गोविंदराव भिडे को लेकर आ। (करीम सलाम करते हुए चला जाता है) मुनीम जी, करीम ने वसूली में कितनी रकम लाई?

मुनीम जी : मालिक, उसने सिर्फ तीस रूपये लाये थे, मैंने जमा कर लिये हैं।

गोपालराव : सिर्फ तीस रूपये?

मुनीम जी : जी, महज़ तीस रूपये! कई किसानों ने मना कर दिया है। वे बकाया चुकाने में टालमटोल कर रहे हैं। लगभग सत्तर किसानों ने तो बगावत ही कर दी है। वसूली करना मुश्किल हो गया है। कुछ किसान तो बौरा ही गए हैं!

गोपालराव : (गुस्से से भरकर) फिर तो एक–एक का कान पकड़कर, उन्हें कोर्ट–कचहरी की कैंची में फँसाकर उनकी मस्ती उतारनी पड़ेगी। सिर से पानी गुज़रने से पहले एक–एक को कुचलना होगा!

मुनीम जी : जी सरकार!

गोपालराव : इन हरामखोर किसानों की सूची तैयार करो और उन पर नालिश करने का प्रबंध करो! मैं सब समझ रहा हूँ। इन किसानों को मेरे दुश्मनों – मुकिंदा–महीपत–राणूजी ने भड़काया है! इसीलिए इन मुर्दों में जान आ गई है। इनके बाप–दादे हमारे पूर्वजों के सामने सिर झुकाए खड़े रहते थे, यहीं... इसी जगह पर... (उंगली दिखाकर) इसी जगह पर वे लोग धूप–पानी–बरसात में खड़े रहते थे! नाक रगड़ते थे! अब वे ही लोग सिर उठाने लगे हैं, आग मूतने लगे हैं। मगर वे भी क्या याद रक्खेंगे कि गोपालराव भी नानासाहेब का पोता है! ... अरे, हम भी गणपतराव के बेटे ... शेर के बच्चे हैं! दिखा दो दम! बहा दो पैसा!

मुनीम जी : जी, क्या और कैसे करना है, आदेश दीजिये।

गोपालराव : मगरूर किसानों का जीना हराम कर दो! उनको ज़िंदगी भर के लिए सबक मिलना चाहिए! उनका घर–द्वार उजाड़ना होगा, वरना हमें इस येलापूर में रहना असंभव हो जाएगा!

मुनीम जी : (नम्रता से) जी सरकार, मैं कल ही तैयारी करता हूँ।

गोपालराव : करनी ही होगी! उसके बिना अब काम नहीं चलेगा। ये किसान हमें नामर्द समझने लगे हैं! हमारी छाती पर नाचने लगे हैं! मुझसे आमना–सामना करने की हिम्मत नहीं है इसलिए मेरे दुश्मन मेरे किसानों को भड़का रहे हैं! मगर देख लेना... अंततः मैं ही उन पर भारी पड़ूँगा! क्योंकि ...

(गोविंदराव भिडे का प्रवेश)

गोविंदराव : क्योंकि दुनिया ही युद्ध का मैदान है और इस रणभूमि पर मरने–मारने वाले ही लड़ते हैं! नमस्कार सरकार!

(गोविंदराव दुबला–पतला, ठिगने कद का, मगर तेज़ बुद्धि इंसान है। सिर पर ज़रीदार साफ़ा, अंगरखे पर ढीला कोट, मलमल की धोती पहने हुए रौब से प्रवेश करता है। उम्र लगभग 35 है।)

गोपालराव : (सम्मान के साथ) आइये आइये भिडे! मैं आपकी ही प्रतीक्षा कर रहा था। पधारिये।

गोविंदराव : (शान के साथ धीमी गति से आता है) फर्माइये!

गोपालराव : बैठिये न! बैठिये, बताता हूँ।

गोविंदराव : नहीं, पहले आदेश दीजिये। ये सेवक हाजिर है!

गोपालराव : बताता हूँ, बैठिये! मुनीम जी, पहले चाय पिलाइये। करीम! (पुकारने पर करीम का प्रवेश) पान ला! (करीम और मुनीम जी क्रमशः बाहर और रसोई की ओर जाते हैं।) अरे बैठिये तो!

गोविंदराव : नहीं मालिक, पहले काम बताइये।

गोपालराव : (उसका हाथ थामकर बैठाते हैं) बैठिये, बताता हूँ। इस येलापूर में मैं अपनी परेशानी सिर्फ आपसे ही साझा कर सकता हूँ! (गंभीर होकर) गोविंदराव! आप सब जानते हैं! मुकिंदा की और हमारी दुश्मनी तीन पीढ़ी से चली आ रही है, आपको पता ही है। मगर मैं इन दिनों ज़रा घबराहट महसूस कर रहा हूँ। मैं अपने–आप को कमज़ोर महसूस कर रहा हूँ। मुझे लग रहा है कि, मुझसे कहीं गलती हो गई है! मगर क्या गलत हो रहा है, मैं समझ नहीं पा रहा हूँ। कभी–कभी मुझे लगता है कि शेरनी के गर्भ से मेमना कैसे पैदा हो गया! मगर फिर लगता है कि नहीं, ... शेरनी के गर्भ से मैं शेर ही पैदा हुआ हूँ। हमारा दुश्मन मुकिंदा, कभी भी हमारी बराबरी नहीं कर सकता! मगर मुझे आश्चर्य इस बात का है कि, जिनके बाप–दादों ने हमारे पूर्वजों के सामने कभी सिर ऊँचा नहीं किया, उनकी औलादों में इतना दम कहाँ से आ गया?

गोविंदराव : आप यहीं गलती कर रहे हैं सरकार, क्योंकि कहा जाता है कि कुएँ को कभी टूटा हुआ और किसान को कभी छोटा नहीं समझना चाहिए। कभी–कभी गोह के गर्भ से भी साँप का जन्म होता है!

गोपालराव : ठीक है, मगर हम उनका सिर तो कुचल सकते हैं न?

गोविंदराव : बिल्कुल! क्यों नहीं? अपने पिता को डसने वाले तक्षक नाग को निर्वंश करने के लिए जनमेजय राजा ने नाग वंश का समूल नाश करने के लिए यज्ञ आरम्भ किया था। समूची धरती–आसमान थर्रा उठे थे। ...आपके दादा और पिता को डसने वाले नाग आज येलापूर में जीवित हैं। इस स्थिति में आपका हिम्मत हारना ठीक नहीं है।

गोपालराव : अरे नहीं भिडे, मैं हिम्मत नहीं हार रहा हूँ! मगर क्या बताऊँ, कल रात मैंने एक सपना देखा! ... बहुत भयानक सपना! मैं उसके कारण परेशान हूँ।

गोविंदराव : भयानक सपना?

गोपालराव : हाँ... उसके बाद से मुझे डर लग रहा है!

गोविंदराव : ओह... अच्छा! तो आपने पंचाँग दिखवाने के लिए मुझे याद किया है!

गोपालराव : (खिन्न होकर) हाँ, बहुत अजीब सपना है इसलिए...

गोविंदराव : तो बताइये न! मैं पंचाँग लेकर ही आया हूँ। (जेब से पंचाँग निकालकर सामने फैलाता है) हाँ... बताइये! ...

गोपालराव : (लंबी साँस लेकर) भिडे, मुझे सपने में एक बहुत ही उग्र, भयानक हट्टाकट्टा आदमी दिखा था! (मुनीम जी चाय लेकर आता है। उनके सामने रखकर अपनी जगह पर जाकर बैठ जाता है) पहले चाय पी लीजिये!

गोविंदराव : आप बताइये, मैं सुन रहा हूँ। (चाय की घूँट भरते हैं) तो, उस आदमी ने क्या किया?

गोपालराव : उसने? ... उसने मुझे अचानक गोली मार दी!

गोविंदराव : (आश्चर्यचकित होकर कप नीचे रख देते हैं) क्या? गोली मार दी? फिर आगे क्या हुआ...

गोपालराव : मेरी छाती से खून का फौव्वारा फूट पड़ा! (हाथ से छाती मलने लगता है, तभी करीम पान लेकर आता है)

करीम : (पान देता है) मालिक, बाहर सर्जेराव रामोशी और पांडू नाई आए हैं।

गोपालराव : भेज दे उन्हें भीतर।

(करीम उन्हें भीतर लिवा लाता है। पांडू नाई की उम्र 30 वर्ष, उसने एक सादी बंडी, जैकेट पहनी है, सिर पर बड़ा–सा साफा और बगल में नाई–पेटी लिये हुए है। सर्जेराव रामोशी लंबा–चौड़ा, उम्र लगभग 55, धोती–कुर्ता पहने, कंधे पर कंबल, हाथ में भाला और सिर पर पुरानी शैली का साफा बांधे हुए आता है। दोनों आगे बढ़कर फर्शी सलाम करते हैं। गोपालराव गर्दन हिलाकर उसका स्वीकार करते हैं।)

गोपालराव : बैठिये नाईक! पांडू तू भी बैठ! भिडे, नाईक का काम निपटाकर आपसे आगे बात करता हूँ। हाँ, तो नाईक, बताओ, क्या काम है? और पांडू, आज मेरी तबियत ठीक नहीं है, इसलिए आज तू जा, कल सुबह आना। (दाढ़ी सहलाते हुए) कल ही बना देना। (पांडू फर्शी सलाम बजाते हुए चला जाता है) हाँ, नाईक...

सर्जेराव : मालिक, मेरे बेटे को कल महीपत ने पीटा। सोचा, आपके कान में ये बात डाल दूँ! आपके अलावा इस दुनिया में हमारा मालिक कौन है!

गोपालराव : क्यों... क्यों मारा?

सर्जेराव : बताते हैं कि, मेरे मल्लू ने मुकिंदा के घरवालों को छेड़ा!

गोपालराव : छेड़ा? किसी औरत का पल्लू खींचा या उसे देखकर आँख मारी?

सर्जेराव : यह तो मैं नहीं जानता मालिक...

गोपालराव : तो... कल जाकर उस मुकिंदा से पूछो और कहो कि, ये सब नहीं चलेगा। कोई भी किसी से भी यूँ मारपीट नहीं कर सकता। यह मुगलों का राज नहीं है। और सच बताऊँ नाईक, यह खुराफात जानबूझकर की गई है क्योंकि तुम्हारा मल्लू मेरी बैठक में हाजिरी देता है और मेरा वफादार है।

सर्जेराव : तो फिर मेरे लिए क्या आदेश है?

गोपालराव : तुम खुद जाकर उससे इस दादागिरी का कारण पूछो। उसके बाद आगे की सोचेंगे। हो जाने दो तमाशा!

सर्जेराव : जी ठीक है, जाकर पूछता हूँ। अब इजाज़त दीजिए।

गोपालराव : हाँ हाँ, दबके से पूछो! हमारे रहते इस तरह का कोई भी अन्याय हम बर्दाश्त नहीं करेंगे।

सर्जेराव : जी, इसीलिए आपके पास आया था!

गोपालराव : ठीक है, जाइये और मल्लू को भेज दीजिए, कुछ काम है! (सर्जेराव फर्शी सलाम करता है) देखा भिडे, कैसी गुंडागर्दी चल रही है येलापूर में!

गोविंदराव : (नम्रता से) मालिक, मैं सब जानता हूँ! मगर मैं कहता हूँ कि ये रामोशी भी

इसतरह कमज़ोर क्यों पड़ रहे हैं? अरे, रामोशी कहते ही वह उमा जी रामोशी याद आते हैं, जिन्होंने अंग्रेज़ों की शक्तिशाली सत्ता से सीधे युद्ध छेड़ दिया था। उसमें जेजुरी के जंगल में अंग्रेज़ों को उमा जी से समझौता करना पड़ा था। वो रामोशी ... उसने पन्हाला से लेकर पुणे राज्य तक रामोशी लोगों को इकट्ठा कर एक फौज खड़ी कर ली थी। और ये रामोशी...

गोपालराव : सच है। भिडे, रामोशी लोगों को अपनी ताकत का अहसास नहीं है। इसीलिए ये किसान इनके नाक में दम कर दे रहे हैं। सर्जेराव, जाओ और मल्लू के साथ जो अन्याय हुआ है, उसका बदला लो। हम हैं ...

सर्जेराव : ठीक है! मालिक, तो मैं जाता हूँ। (प्रस्थान)

गोविंदराव : अब रामोशी को भड़का दिया है... तो आग ज़रूर लगेगी। आप अपने सपने के बारे में बताइये।

गोपालराव : हाँ... तो उसने मुझ पर गोली चला दी और मैं नीचे गिर पड़ा। (दौलती का प्रवेश। अचानक उसके हाथ से थाली छूटकर गिर जाती है, ज़ोर से झनझनाहट की आवाज़ होती है। इनामदार और गोविंदराव भयभीत होकर देखते हैं। इनामदार दौलती को गुस्से से घूरते हुए एक–एक कदम आगे बढ़ता है। दौलती गर्दन झुकाकर खड़ा है। इनामदार उसके पास पहुँचकर रूकता है, फिर वापस लौटता है)

गोपालराव : दौलती, बाहर जा... नहीं, बल्कि सीधे घर जा! (दौलती जाता है)

गोविंदराव : मतलब आप मर गए!

गोपालराव : बिल्कुल! उसके बाद पुलिस आई! उन्होंने मेरी लाश गाड़ी में रखवाई। (अचानक कुछ याद आकर) नहीं... नहीं... मेरी मृत्यु की खबर पहले आपको मिली और आप दौड़ते हुए आए।

गोविंदराव : कौन? मैं दौड़ते हुए आया? और...

गोपालराव : और क्या? मेरी लाश को देखते ही आपकी घिग्घी बँध गई!

गोविंदराव : (चमककर) क्या? मेरी घिग्घी बँध गई? तब तो वाकई यह बहुत भयानक सपना है!

गोपालराव : हाँ, और आप रोते हुए उस गाड़ी के पीछे आ रहे थे!

गोविंदराव : ओह... अति भयानक! (घबराकर पंचाँग अलटने–पलटने लगता है। कुछ बुदबुदाते हुए उंगलियों पर गिनने लगता है। पसीना पोंछता है। गंभीर चेहरे से फिर पंचाँग देखता है, मगर उसके मुँह से एक भी शब्द नहीं फूटता! गोपालराव उसके चेहरे को उत्सुकता से निहार रहा है) ...मैं कहता हूँ...

गोपालराव : क्या कहते हैं?

गोविंदराव : मेरी घिग्घी क्यों बँधेगी? (सम्हलते हुए) मतलब... मेरी घिग्घी... पहले मैं यह देख लेता हूँ कि मेरी घिग्घी क्यों बँधी, बाद में देखता हूँ कि आप क्यों मरे!

गोपालराव : अरे नहीं! यह कैसे संभव है? पहले मैं क्यों मरा, इसका कारण पता चले बिना आपकी घिग्घी बँधने का सवाल कैसे आएगा? ...मतलब पहले मेरा मरना, उसके बाद आपकी घिग्घी! ...इसलिए पहले मेरी मृत्यु देखिये।

गोविंदराव : (गंभीर होकर) ठीक है, वही सही! (फिर पंचाँग देखता है, कुंडली बनाता है) हूँ... मिल गया!

गोपालराव : मिल गया? कौन है वो?

गोविंदराव : वो न? वो है आपका कुलदेवता कालभैरव!... वो नाराज़ हुआ है आपसे!

गोपालराव : कौन? कालभैरव – हमारा कुलदेवता? मगर नाराज़ क्यों हुआ?

गोविंदराव : देवताओं को नाराज़ होने के लिए बड़े कारणों की ज़रूरत नहीं होती! यहाँ स्पष्ट कहा गया है कि पूजा ठीक से नहीं होती! सब कुछ अव्यवस्थित है।

गोपालराव : पूजा नहीं होती? नहीं नहीं, ऐसा कैसे हो सकता है? मुनीम जी दिन में तीन

बार पूजा करते हैं! पुरानी हवेली में दीदी पूजा करती है! फिर यह नाराज़गी क्यों हुई?

गोविंदराव : देखिये, नाराज़गी का कोई एक ही कारण नहीं होता। अब देखिये, आपने पुत्र–प्राप्ति के लिए अपने कुलदेवता की आराधना करने की बजाय माई को काशी भेज दिया, यह क्या छोटा अपराध है?

गोपालराव : ओह... तो अब क्या करना होगा?

गोविंदराव : अब सबसे पहले स्वप्न–शांति के लिए एक भोज दीजिए; सिर्फ ब्राह्मणों को! दूसरी बात, माईसाहेब को तुरंत वापस बुला लीजिए!

गोपालराव : आप एकदम सच कह रहे हैं! जिसने मुझ पर गोली चलाई न, वह बिल्कुल कालभैरव जैसा ही दिख रहा था! लंबी मूँछें, घनी भौंहें, लंबा–चौड़ा शरीर...

गोविंदराव : वही, भैरोबा ही है! मैं झूठ थोड़े ही बोल रहा हूँ! मैं शेखी नहीं बघार रहा हूँ, मगर अपने इस पंचाँग के बलबूते मैं सभी देवताओं को यहाँ लाकर लाइन से खड़ा कर सकता हूँ!

गोपालराव : सही बात, एकदम सही बात है! मगर आपकी आवाज़...

गोविंदराव : (डरकर) अरे हाँ, मगर अब मैं उसे घर जाकर देख लूँगा! इजाज़त दीजिए, रात हो रही है! जाता हूँ... (हड़बड़ाकर उठता है, फिर बैठ जाता है।)

गोपालराव : ठीक है, जाइये! मुनीम जी, लालटेन जला दो! और ये करीम कहाँ गया? करी ऽऽ म! (करीम तुरंत आता है) तू रूक जा, अभी मत जाना!

गोविंदराव : ठीक है, नमस्ते! (जैसे कुछ याद आया हो) मगर मालिक! डरने की ज़रूरत नहीं है! लोग कहते हैं कि, जो घटनाएँ सपने में घट जाती हैं, वे यथार्थ में नहीं उतरतीं!

गोपालराव : सच है! मगर दूध का जला छाछ भी फूँक–फूँककर पीता है! इसलिए उसे...

गोविंदराव : मतलब बकरे के अनुसार छुरी...

(गोविंदराव खड़ा होता है)

गोपालराव : छुरी...! (खड़े होते हुए) मेरे सामने अब दो ही रास्ते हैं! छुरी चलाना या चलवा लेना! मगर मेरी दिली इच्छा है कि अपनी नज़रों के सामने अपने दुश्मन को ख़त्म होते देखूँ; उसके बाद मैं ख़तम होऊँ!

गोविंदराव : तथास्तु! ऐसे ही होगा... आप भरोसा रखिये!

गोपालराव : मैं आपके बूते पर ही भरोसा रख रहा हूँ! आप मेरा ध्यान रखियेगा! आप..., ज्योतीबा पवार... और मल्लू नाईक जैसे साहसी लोग मेरे पीछे खड़े हैं तो (अपनी छाती ठोंककर) ये बहादुर, शेर के गले में भी रस्सी बाँध देगा!

गोविंदराव : सरकार? हम तो आपके अपने हैं! अजी, आपके पिताजी से हमारे पिताजी और हमारे पिताजी से आपके पिताजी...

गोपालराव : दो जिस्म और एक जान रहे हैं! दोनों समूचे क्षेत्र पर धाक जमाकर और कीर्ति की पताका फैलाकर चले गए; वैसे ही हम भी राज करेंगे और चले जाएंगे! चलिये, कल मिलते हैं!

गोविंदराव : ज़रूर! नमस्ते!

(प्रस्थान। उसे दरवाज़े तक छोड़ने के लिए गोपालराव भी जाता है। मुनीम जी भगवान के सामने दिया जलाता है और प्रणाम करता है)

करीम : (सिर खुजलाते हुए व्यंग्य से) मुनीम जी, इनके पिताजी से उनके पिताजी और उनके पिताजी से इनके पिताजी...; यह क्या पहेली है?

मुनीम जी : चुप रह... बात मत कर! वे लोग बाहर हैं!

गोपालराव : (भीतर आते हुए) मुनीम जी, बहके हुए किसानों की सूची तैयार हो गई?

मुनीम जी : जी, हो गई!

गोपालराव : कितने हैं?

मुनीम जी : लगभग पैंसठ...

गोपालराव : (गुस्से से) क्या करें? हमारे हाथ तो कानून से बंधे हुए हैं! वरना एक–एक को यहाँ बुलवाकर, गर्दन पकड़कर उनके सिर पर पत्थर रखवाकर छै–छै महीने खड़ा कर देते! मगर अब कानून की तलवार चलाकर ही एक–एक को ख़त्म करना पड़ेगा! कर दो धमाका!

मुनीम जी : **जी,** कल ही सब बंदोबस्त करता हूँ!

गोपालराव : बिल्कुल, करना ही पड़ेगा! मगर वह रामू का बच्चा कहाँ है?

मुनीम जी : करीम! रामू की क्या खोज–खबर? कहाँ है वह?

करीम : जी, मुझे तो पता नहीं!

गोपालराव : अरे, तुम दोनों एक ही घर के नौकर हो और तुम लोग एक–दूसरे के बारे में नहीं जानते?

मुनीम जी : मालिक, तीन दिन से रामू न तो आया है और न उसकी कोई खबर है!

गोपालराव : अरे अरे अरे! ये क्या है? तुम लोगों ने कोई पूछताछ तक नहीं की? करीम, उसके घर जाकर पता लगाकर आ। उसे बाघ तो नहीं खा गया?

करीम : नहीं नहीं! मुझे पता है कि, रामू को बाघ खा भी गया, तो वह उसके पेट में मरेगा नहीं!

(उसी समय रामू का प्रवेश। दुबला–पतला, सादी बंडी, धोती और गमछा बाँधा है। हाथ में लाठी है, उम्र 25 है। वह पैर को घसीटते हुए, कराहते हुए धीरे–धीरे भीतर आता है। उसके चेहरे से साफ झलक रहा है कि उसे बहुत ज़्यादा दर्द हो रहा है। गोपालराव, मुनीम जी और करीम उसे आश्चर्य से देखते हैं। वह धीरे से नीचे बैठता है।)

गोपालराव : (गंभीर होकर) क्यों रामू, कहाँ था तीन दिन? सच सच बता!

मुनीम जी : देख, सच बता, नाटक मत करना!

करीम : हाँ, अभी होली बहुत दूर है!

गोपालराव : अरे बोल न रामू!

रामू : सरकार, मैं घर में ही था।

गोपालराव : क्या? घर में ही था? तो यहाँ क्यों नहीं आया? वसूली हुई रकम कहाँ है?

रामू : मालिक, वसूली हुई ही नहीं। दरअसल, मैं चल नहीं पा रहा था। मैं किसी खरगोश की तरह बुरी तरह डर गया हूँ!

गोपालराव : डर गया है? क्यों, क्या हुआ?

रामू : क्या बताऊँ...

गोपालराव : ठीक से बता... और सच बता!

मुनीम जी : ए, ठीक से बता, इतरा मत!

रामू : परसो मैं वसूली का तगादा कर लौट रहा था (कराहते हुए पैर फैलाता है), उस सत्ती चौरे तक पहुँचा ही था कि सहसा नरशा बागी सामने आ गया, और फिर तो...

गोपालराव : (चौंककर) कौन नरशा? (करीम और मुनीम जी नर्म पड़कर सुनते हैं)

रामू : हाँ नरशा! उसने मुझसे पूछा, तू कौन है? मैंने उसे सीधे बता दिया कि मैं सिपाही हूँ।

गोपालराव : तो नरशा ने क्या कहा?

रामू : उसने मुझे गिरफ्तार कर लिया। तब मैंने उसे बताया कि मैं सरकारी सिपाही

नहीं, बल्कि देशमुख का सिपाही हूँ।

गोपालराव : तो उसने क्या किया?

रामू : उसने आगे बढ़कर ऐसी लात जमाई कि मेरी कमर ही टूट गई।

गोपालराव : अरे बापरे! फिर?

रामू : तुरंत दूसरी लात!

मुनीम जी : दूसरी?

रामू : तीसरी भी...

करीम : क्या?... तीसरी?

रामू : उसके बाद चौथी!

गोपालराव : अरे...अरे...

रामू : पाँचवीं!

मुनीम जी : अरे तो फिर?

रामू : छठवीं!

करीम : या खुदा!

रामू : सातवीं... आठवीं लात मार–मारकर उसने मुझे नीचे गिरा दिया!

गोपालराव : (घबराकर) उसके बाद?

रामू : उसके बाद उसने मुझे सज़ा दी।

मुनीम जी–

करीम : (एक साथ) सज़ा?

रामू : हाँ सज़ा...! पहले मेरे ऊपर मुकदमा ठोंका और फिर सज़ा सुना दी!

गोपालराव : क्या सज़ा दी उसने तुझे?

रामू : एक हजार उठक–बैठक और पाँच सौ दंड...!

गोपालराव : तो तू ने क्या किया?

रामू : मरता क्या न करता! उठक–बैठक करने लगा!

गोपालराव : फिर क्या हुआ?

रामू : उठक–बैठक लगाते–लगाते बेजान लकड़ी के कुंदे की तरह नीचे गिर पड़ा और मरने का नाटक करने लगा।

गोपालराव : तो, उसके बाद तो तू छूट गया न?

रामू : जी, उसके बाद छोड़ा! मरने के बाद क्या करता!

मुनीम जी : तू एक हजार बार उठक–बैठक किया?

करीम : और पाँच सौ दंड?

गोपालराव : उसके बाद तू घर लौटा? एक हजार बार उठक–बैठक करने के बाद?

रामू : हाँ, उसकी चिट्ठी पहुँचानी थी इसलिए उसने मुझे छोड़ा। नहीं तो...

गोपालराव : चिट्ठी... कैसी चिट्ठी?

रामू : आपके लिए चिट्ठी दी है उसने!

(अपने गमछे में बंधी चिट्ठी निकालकर देता है। गोपालराव शक्तिहीन होकर चिट्ठी लेता है। मुनीम जी घबराकर इधर–उधर देखने लगता है।)

गोपालराव : मुनीम जी, पढ़ो तो इसे!

मुनीम जी : (लालटेन के पास ले जाकर घबराते हुए चिट्ठी पढ़ता है) देशमुख गोपालराव! आज से तीन दिनों के भीतर एक हजार रूपये पहुँचा दो, वरना घर में मेरी गोली का सामना करने के लिए तैयार हो जाओ!

गोपालराव : (घबराकर चीखता है) गोली? मुनीम जी, करीम... रामू... अब क्या करें? मुझे नरशा डाकू गोली से उड़ा देगा! (आवाज़ धीमी करते हुए) करीम, जा,

जाकर गोविंदराव भिडे को बुला ला! (करीम झिझकते हुए लालटेन की ओर देखता है)

करीम : लालटेन ले जाता हूँ...

गोपालराव : (थरथर काँपते हुए) मुनीम जी, अब क्या होगा? क्या करूँ? तीन दिन के भीतर...! चिट्ठी देकर कितने दिन हुए? गिनो तो... करीम, रूक...

मुनीम जी : (थरथराती उंगलियों से गिनने लगता है) आज... आज तीन दिन हो गए। फिर तो वह... (घबराकर इधर–उधर देखने लगता है)

गोपालराव : फिर तो आज वो आएगा और मुझ पर गोली दागेगा! क्यों रे रामू, जब शुक्रवार को चिट्ठी मिली थी तो कम से कम शनिवार को लाकर दे देता! अब हम क्या करें?

रामू : अब मैं भी क्या करता, चल ही नहीं पा रहा था!

मुनीम जी : ओह...! तो अब आगे क्या करना है बताइये! नरशा आज आएगा... या हो सकता है, न भी आए। मगर हमें सावधानी तो बरतनी ही होगी!

रामू : नहीं नहीं, वो पक्का ही आएगा! अभी भी आ सकता है!

करीम : पक्का आएगा? या खुदा!

गोपालराव : (धीमी आवाज़ में) करीम, तू बाहर जाकर रूक! (करीम डरते हुए बाहर जाता है) मुनीम जी, तिजोरी में कितनी नकदी होगी?

मुनीम जी : एक हजार नौ सौ पचास!

गोपालराव : (खूँटी पर लटकी बंदूक उतारकर) मुनीम जी, मैं पीछे के दरवाज़े से निकल रहा हूँ। तुम उसके बाद रकम निकाल कर ले आना! (आहट लेते हुए भीतर के कमरे में जाता है। करीम का प्रवेश। मुनीम जी धीरे से पूछते हैं)

मुनीम जी : रामू, नरशा ने मेरा नाम भी लिया था क्या रे? तुझे कसम है... सच बता!

रामू : तो क्या! आपको कैसे भूल सकता है वो! वो जानता है कि, आपके पास ही तिजोरी की चाबी होती है! मुनीम जी मतलब तिजोरी की चाबी!

मुनीम जी : वह क्या कह रहा था... मेरे बारे में?

रामू : वो कह रहा था कि, एक हजार उठक–बैठक और दो हजार दंड पेले बिना तो मुनीम चाबी देगा नहीं!

मुनीम जी : बाप रे! एक हजार उठक–बैठक और दो हजार दंड! हे भगवान! अब मैं क्या करूँ?

रामू : अरे, दंड–बैठक के पहले ही आप स्वांग भरने लगे! मैंने तो बाद में स्वांग भरा था!

करीम : रामू चल, हम लोग घर चलें!

रामू : तू जा ... अब नरशा आ ही रहा होगा! क्यों करीम, होली तो काफी दूर है न? रूककर देख न, अब आ ही रही है होली!

(तभी गोपालराव भीतर से भागते हुए आता है। उसे देखकर मुनीम जी और करीम और ज़्यादा डर जाते हैं।)

गोपालराव : (फुसफुसाते हुए) मुनीम जी, मुझे कोई दिखाई दिया...

(मुनीम जी, रामू, करीम, गोपालराव डर से काँपते हुए दरवाज़े की ओर देखने लगते हैं। वातावरण एकदम गंभीर हो जाता है। देशमुख धीरे–धीरे पीछे हटता है और अपनी बंदूक खूँटी पर टाँग देता है। तभी करीम और मुनीम जी भी एकदम पीछे हटते हैं। नरशा अपने दो साथियों के साथ भीतर घुसता है। उसका चेहरा उग्र है। बड़ी–बड़ी मूँछें और घनी भौंहें हैं। वह शरीर

से लंबा–चौड़ा और हट्टाकट्टा है। उसके कंधे पर बंदूक और गले में कारतूस की पेटी लटक रही है। हाथ में उसने फरसा थाम रखा है। उसके साथी भी उग्र और हिंस्र हैं। उनके हाथों में कुल्हाड़ी है। गोपालराव नरशा को सामने देखकर चित्रवत जम जाता हैं। मुनीम जी और करीम अपनी जगह पर बेचैनी से पहलू बदल रहे हैं।)

नरशा : (अपने पाँव आगे–पीछे जमाते हुए) देशमुख, मैं नरशा आ गया हूँ!
गोपालराव : (होश में आते हुए) न... न... र... शा

(मुनीम जी भीतर भागने की कोशिश करता है)

नरशा : (धमकाते हुए) हाँ... नरशा बागी! (मुनीम जी को भागते देखकर) ए मुनीम जी, ठीक से खड़ा रह, नहीं तो गोली मार दूँगा। भाग मत! कोई भी भागने की कोशिश नहीं करेगा, गोली चला दूँगा!
मुनीम जी : (पहले वाली जगह तक सरकते हुए) नहीं नहीं! मुझे गोली की बजाय दंड–बैठक पेलते हुए मरना ज़्यादा पसंद है! वो ज़्यादा ठीक है।
नरशा : तो भीतर कहाँ जा रहा था?
मुनीम जी : भीतर? भीतर दंड–बैठक करने जा रहा था! मैं यह भीतर ही कर लूँगा!

(दंड–बैठक पेलने लगता है)

नरशा : रहने दे। वहीं खड़ा रह! (मुनीम जी बैठ जाता है। गोपालराव से) ए देशमुख...!
गोपालराव : (हड़बड़ाकर) मुनीम जी! (मुनीम जी खड़ा हो जाता है।)
नरशा : गोपालराव!

(मुनीम जी फिर बैठ जाता है)

गोपालराव : (खुद को सम्हालकर) हाँ, आओ नरसू, आओ!
नरशा : (आँखें दिखाते हुए) मेरी चिट्ठी?
गोपालराव : हाँ, मिली थी... चिट्ठी मिल गई थी!
नरशा : तो ठीक से खड़ा हो!
गोपालराव : नहीं... नरसू ... नरसू! चिट्ठी मुझे देर से मिली! मुझे मत मार! मैंने जानबूझकर नहीं टाला है! तुझे कितने रूपये चाहिए? बोल... आदमी से पैसा थोड़े ही बड़ा है!
नरशा : झूठ! पैसे से आदमी की इज्जत बड़ी होती है! तू ने मेरी इज्जत नहीं की, क्योंकि तुझे अपनी इज्जत प्यारी है! मगर अब मुझे अपनी इज्जत के लिए तुझे मारना पड़ेगा! चल जल्दी कर!
गोपालराव : नहीं नहीं! मेरी इज्जत तो मेरे ज़िंदा रहने में है। ज़िंदा रहूँगा तो पैसा रहेगा, पैसा रहेगा तो सब कुछ रहेगा!
नरशा : तो निकाल पैसा! एक हजार रूपये; पूरे...
गोपालराव : हाँ बिल्कुल, खुशी से! बस मुझे जीवनदान दे दे! एक हजार क्या चीज़ है! मगर... मुनीम जी, नरसू को दो हजार दे दो!
नरशा : (ज़ोर से) नहीं, मुझे एक हजार ही चाहिए!
मुनीम जी : दो हजार! (भीतर जाने लगता है)

नरशा : (चिल्लाकर) ए रूक! कहाँ जा रहा है?

मुनीम जी : (घबराकर) चा... चा...बी!

गोपालराव : नरसू, शांत हो जाओ! पैसे ले जाओ! बैठो!

नरशा : क्या बात है! बैठो..., गोपालराव, जैसे तू मुझसे डर रहा है न, वैसे ही मैं भी तुझसे डर रहा हूँ! दूर से बात कर! तू और मैं, एक ही थैली के चट्टे–बट्टे हैं!

गोपालराव : नहीं। मुझे माफ कर! मुझे माफ कर कि, तुझे यहाँ आना पड़ा। मेरी सारी दौलत ले जा! (नाटकीय होकर) आज मुझे बहुत खुशी हुई है। मेरा सौभाग्य है कि, तेरे जैसा शेर–आदमी मेरे घर आया है! मैं बेईमान नहीं हूँ। अरे! पैसे के लिए आदमी, आदमी को क्यों मारे?

नरशा : मैं भी यही सोचता हूँ। आप तगादा करके आदमियों को मारते हैं, मैं उठक–बैठक लगवाकर आदमी को मारता हूँ। मगर, अब मैं आदमी मार–मारकर ऊब गया हूँ!

मुनीम जी : मुझे तेरी बात सही लगती है! मतलब...गोली से उठक–बैठक ठीक है!

नरशा : हाँ, क्योंकि गोली मिलना ज़्यादा कठिन होता है! वैसे भी गुड़ से मरनेवाले को ज़हर क्यों दिया जाए?

गोपालराव : सच है! नरसू, बैठ, शांत हो जा! तुझे जितना पैसा चाहे, ले जा! यह समूची दौलत तू अपनी ही मान ले! बस, मेरी एक बिनती है। (हाथ जोड़ता है)

नरशा : क्या? बोल!

गोपालराव : तू मुझे अपना मान ले! मैं शंकर भगवान की कसम खाता हूँ... बेलपत्र उठाकर कहता हूँ, मैं तुझे धोखा नहीं दूँगा! मगर...

नरशा : (शांत होकर सोफे पर बैठ जाता है) मगर क्या?

गोपालराव : मुझे तेरे जैसे बहादुर दोस्त की ज़रूरत है! तू पैसे ले ले! मुनीम जी, नरसू जितना चाहे, उतना पैसा उसे दे दो! बस नरसू, मेरी इतनी ही बिनती है कि, तू मेरा खास ख्याल रख! मंजूर है? (उसकी ओर हाथ बढ़ाता है)

नरशा : (शांति से) ठीक है, मंजूर है!

गोपालराव : (खुश होकर) तो बैठ! मुनीम जी, नरसू को जो पसंद हो, वही भोजन कराना! अब इस देशमुख का जो कुछ है, वह सब इस नरसू का ही है! ... रामू, अब तू जा! करीम और मुनीम जी, तुम लोग भोजन की तैयारी करो। जाओ! (सब का प्रस्थान) हाँ तो नरसू! (रूकता है, इधर–उधर देखता है, फिर नरशा के सामने घुटनों के बल बैठ जाता है) नरसू, मैं काफी साहसी हूँ, मगर अकेला हूँ। मेरे बहुत सारे दुश्मन हैं! वे मेरे पीछे पड़े हुए हैं! वे मेरी दौलत लूटना चाहते हैं! तू दो दिन के लिए मेरे यहाँ रह जा! जब उन्हें पता चलेगा कि तू अब मेरा दोस्त है, तो वे मेरी ओर आँख उठाकर देखने की हिम्मत तक नहीं करेंगे। मतलब मेरी दौलत और तेरा आतंक – दोनों से वे पूरी तरह नेस्तनाबूद हो जाएंगे! उन अहंकारी लोगों की गर्दन नीची हो जाएगी और मेरी गर्दन हमेशा के लिए ऊँची हो जाएगी! सिर्फ दो दिन मेरे यहाँ रूक जा!

नरशा : ठीक है! मैं दो दिन रूक जाऊँगा!

गोपालराव : बस, इतना ही पर्याप्त है! तेरी इस अहसान की गठरी को, बल्कि पहाड़ जितने ऊँचे अहसान को मैं हमेशा याद रखूँगा! बस... एक बात...

नरशा : क्या बात?

गोपालराव : सम्हलकर रहना! यहाँ कुछ लोग ज़रा ज़्यादा ही सयाने हैं! उनके पास कुछ हथियार भी हैं!

नरशा : (गंभीर होकर) तो?

गोपालराव : (गंभीर होकर) जब तक मेरे दुश्मनों के पास हथियार रहेंगे, तब तक तू

सुरक्षित नहीं रह पाएगा!

नरशा : तो क्या करूँ?

गोपालराव : सीधी–सी बात है! जिस तरह दूसरों के पास असीमित ज़मीन होने पर मेरी ज़मींदारी नहीं चल सकेगी, उसी तरह दूसरों के पास हथियार होंगे तो तेरे आतंक की हवा नहीं टिक पाएगी! इसलिए जिस तरह दूसरों की गरीबी पर ही मेरी अमीरी टिकी रह सकती है, वैसे ही दूसरों को कमज़ोर करके तुम्हारी ताकत बनी रहेगी!

नरशा : तो फिर किस–किसके पास हथियार हैं, उनके नाम बताइये। मुझे भी हथियारों की सख़्त ज़रूरत है!

गोपालराव : बताता हूँ, बताता हूँ! पहले तू ऊपर वाले कमरे में चलकर आराम कर... खानावाना खा! उसके बाद हम आराम से बैठकर बातें करेंगे! जा ऊपर! मैं भी तेरे भोजन की व्यवस्था देखता हूँ!

(नरशा और उसके साथी ऊपर के कमरे में चले जाते हैं। जाते वक्त नरशा गोपालराव की बंदूक लेकर जाता है। गोपालराव सोच में डूबे हुए टहलता है। उसके चेहरे पर अत्यधिक खुशी का भाव है। कुछ समय बाद गोविंदराव भिडे का प्रवेश। वह बेहद डरा हुआ है। तेज़ी से आते हुए)

गोविंदराव : मालिक! गजब हो गया! खबर आई है कि नरशा बागी येलापूर में आ चुका है! अब क्या करें?

गोपालराव : (डरने का स्वांग भरकर) हे भगवान! अब क्या होगा?

गोविंदराव : (गंभीरता के साथ) मालिक, चिंता मत कीजिए! मैं अभी देखता हूँ...(जेब से पंचाँग निकालकर सामने फैलाता है। पन्ने पलटने लगता है।) अरे वाह रे बेटा नरशा...

गोपालराव : (ऊपर की ओर देखकर घबराते हुए) गोविंदराव! धीरे बोलिये, मुझे उससे डर लगता है!

गोविंदराव : डर? डर की कोई बात नहीं है! वह नरशा यहीं गाँव में है... येलापूर में!

गोपालराव : (आवाज़ दबाकर) है, मगर धीरे बोलिये न!

गोविंदराव : क्यों? धीरे बोलने की क्या ज़रूरत है? जब तक ये पंचाँग मेरे पास है, मैं उसके बाप से भी नहीं डरता!

गोपालराव : (उसके मुँह पर हाथ रखकर) धीरे बोलिये! वो यहाँ आ जाएगा!

गोविंदराव : नहीं! वो इस हवेली में कभी नहीं आएगा! (नरशा धीमे–धीमे सीढ़ी उतरते हुए आता है। गोविंदराव उसे बिना देखे बोले चला जा रहा है) अगर आ भी जाए, तो यह भिडे उसे इस पंचाँग के बलबूते जलाकर राख कर देगा! (नरशा गोविंदराव के बाजू में आकर खड़ा हो जाता है, उसे देखकर मुँह से निकल पड़ता है) कौन? नरशा...

नरशा : (ज़ोर से चिल्लाकर) कौन है रे तू?

गोविंदराव : (नरशा को देखते ही जूड़ी बुखार चढ़ने जैसा काँपने लगता है) मैं... मैं... मैं...

(गोविंदराव कुत्ते की तरह ज़मीन पर लोटने लगता है। गोपालराव उसे उठाने की कोशिश करता है। पहला अंक समाप्त।)

अंक दो

(मुकिंदा के घर का बरामदा, बीच में दरवाज़े की चौखट नज़र आ रही है। भीतर बर्तनों की आवाज़ आ रही है, जिससे दर्शकों को पता चलता है कि भीतर कोई है। दूर से जाँता–चक्की की आवाज़ आ रही है। बरामदे में खूँटी पर सूपा, टोकनी, खेती–किसानी के उपकरण और सामग्री दिखाई देती है। एक खूँटी पर कंबल टँगा हुआ है। चौखट के पास कुल्हाड़ी भी टँगी है।

थोड़ी देर बाद मुकिंदा की बहू गुणाबाई लालटेन जलाकर गुनगुनाते हुए बाहर आती है और बरामदे में लालटेन रखकर फिर भीतर चली जाती है। थोड़ी देर बाद फिर बाहर आकर आँगन में तुलसी चौरे पर दिया जलाती है। गुणाबाई की उम्र 20 वर्ष, दिखने में सुंदर, परंतु सादे कपड़ों में है। उसके भीतर जाते ही वातावरण गंभीर लगने लगता है। कुछ देर बाद रामू का प्रवेश। वह इधर–उधर देखता है, आहट सुनता है। चारों ओर शांति देखकर पुकारता है ...)

रामू : आबा! आबा! ओ भाभी जी!

गुणा : (भीतर से ही) कौन है?

रामू : मैं रामजा हूँ गुणा भाभी!

गुणा : (बाहर आकर आश्चर्य से) अरे! देवर जी, गूलर के फूल की तरह कई सालों के बाद दिखाई दे रहे हैं! कहाँ थे इतने दिन?

रामू : क्या बताऊँ भाभी! मेरा तो काम ही तमाम हो गया था, मेरी घरवाली का सिंदूर गाढ़ा था सो बच गया!

गुणा : मतलब?

रामू : मतलब... मैं बिल्कुल स्वर्ग के रास्ते पर पहुँच गया था। मगर बीच रास्ते से ही लौट आया।

गुणा : मैं समझी नहीं, ज़रा ठीक से बताइये न!

रामू : अरे हुआ ये कि, परसो मैं वसूली का तगादा करके लौट रहा था, सूरज डूबने को था... उस सत्ती चौरे के पास... मुझे... मुझे...

गुणा : क्या आपको बाघ ने निगल लिया?

रामू : बाघ ने नहीं, उस नरशा ने रोक लिया!

गुणा : अरे बाप रे! (घबराकर) तो फिर?

रामू : फिर क्या! पीट–पीट कर मेरा भुर्ता बना दिया!

गुणा : हाय राम! उसके मुँह में कीड़े पड़ें! आपने उसके बाप का क्या बिगाड़ा था?

रामू : उसके बाप का कुछ नहीं बिगाड़ा था, इसीलिए बच गया! नहीं तो अब तक मैं स्वर्ग का पुराना सदस्य बन चुका होता! थोड़ा अंगारा दीजिये न!

गुणा : नरशा आदमी है या जानवर!

(भीतर जाकर अंगारे लाती है, रामू बीड़ी सुलगाता है।)

रामू : सही कहा आपने! नरशा न? एकदम जंगली आदमी है... बनमानुस! मगर भाभी, सब लोग कहाँ गए? घर में कोई दिखाई नहीं दे रहा है?

गुणा : सब मतलब?

रामू : सब मतलब दिनकर, महीपति भैया, वो रानू दादा और आबा!

गुणा : क्या बात है! पंडित को ही नहीं पता कि एकादशी कब है! अरे, आप भूल गए क्या, कि आज टालगाँव का मेला है! आप कैसे नहीं गए?

रामू : कैसे जाता? मैं चल कहाँ पा रहा हूँ? मगर आबा कहाँ हैं? उनसे काम था।

गुणा : वे गये हैं महारबाडे में! वो नारूबाबा बीमार है न, उसे देखने गए हैं!

रामू : कितनी देर लगेगी?

गुणा : आ ही रहे होंगे! आप बैठिये! (भीतर जाती है। कूड़ा लेकर बाहर फेंककर लौटती है। लौटते हुए कुछ सोच कर रूकती है और पूछती है) मुझे समझ में नहीं आता कि ये नरशा आदमियों को इसतरह क्यों मारता फिर रहा है?

रामू : क्या कारण हो सकता है! आप तो ऐसे सवाल कर रही हैं कि, कुत्ता पागल क्यों हो गया! एक पागल कुत्ता जब दूसरे को काटता है, तो दूसरा भी पागल हो जाता है! यह बात वैसी ही है! (गुणा भीतर जाती है)

गुणा : (आँचल से हाथ पोंछते हुए बाहर आती है) सुना था कि परसो लटके की बाड़ी में उसने एक औरत को पकड़ लिया था!

रामू : सुना तो मैंने भी है... मगर नरशा के नाम पर अफवाहें भी बहुत उड़ती रहती हैं!

गुणा : उस औरत के आगे–पीछे कोई था या नहीं?

रामू : भाभी, ऐसे लोगों का सामना करने के लिए जान देने से न डरने वाले लोगों की आवश्यकता होती है। परसो मल्या ने आपको छेड़ा और दिनकर के पहले ही महीपती भैया ने भरे बाज़ार में उसको मज़ा चखा दिया। आप भाग्यशाली हैं भाभी, जो आपके पीछे ऐसे लोग खड़े हैं!

गुणा : (गर्व से) सचमुच मैं भाग्यशाली हूँ! दूसरों की जान से खेलने वाले येलापूर में आकर देखें; उन्हें अपनी जान बचाकर भागना पड़ेगा। (फिर भीतर जाने लगती है)

रामू : भाभी नरशा... (रामू अटकता है। गुणा रूक जाती है, खुद को सम्हालती है) नहीं, नरशा येलापूर नहीं आएगा!

गुणा : जी, सही कह रही हैं, बिल्कुल नहीं आएगा!

(बाहर से कोई पुकारता है 'कोई है क्या?' रामू और गुणा आहट लेते हैं। मगर फिर बाहर से 'कोई है क्या घर में? आवाज़ आती है। रामू उठता है)

रामू : (भीतर से ही) कौन है?

सर्जेराव : (बाहर से ही) मैं सर्ज्या रामोशी हूँ!

गुणा : भीतर बुला लीजिये! (खूँटी पर टंगे कंबल की ओर इशारा करते हुए) उसे बिछा दीजिये!

(आँचल से दोनों कंधों को ढाँककर भीतर चली जाती है। सर्जेराव और दो रामोशी भीतर आते हैं। रामू कंबल बिछाता है।)

सर्जेराव : (खड़े–खड़े चौकन्नी निगाहों से इधर–उधर देखते हुए) आबा कहाँ हैं?

रामू : महारबाड़े गए हैं। आ ही रहे होंगे। बैठिये!

सर्जेराव : कब तक आएंगे?

(नीचे कंबल पर बैठता है। उसके पास एक अन्य रामोशी भी बैठता है। मगर तीसरा युवक लाठी थामे खड़ा ही रहता है)

रामू : आओ महादू, बैठो न!

महादू : (गरमी के साथ) क्यों? किसलिए?

रामू : इसलिए कि, कंबल बिछा दिया है! इस तरह खड़ा क्यों है?
महादू : अपने पैरों पर खड़ा हूँ, सिर के बल नहीं। तुम्हें क्या दिख रहा है?
रामू : हाँ, पैरों पर ही खड़े हो! मगर इस तरह ऊँट की तरह क्यों खड़े हो? आदमी की तरह बैठ जाओ!
महादू : तुम इस तरह आड़ी–तिरछी बातें क्यों कर रहे हो?
रामू : देखो, आदमी को इज़्ज़त से पान खाना चाहिए, उबलते काढ़े को नहीं चाटना चाहिए!
महादू : तुम कहना क्या चाहते हो?
रामू : मतलब देशमुख की हवेली में सीढ़ी पर ही पाँव पकड़ लेते हो, और यहाँ कंबल पर बैठने के लिए भी तैयार नहीं हो?
महादू : ए, फालतू बात मत करो!
सर्जेराव : महाद्या, अरे बैठ जा! बेकार क्यों बहस कर रहा है? बैठ!
महादू : नहीं, उस कंबल पर नहीं बैठूँगा।

(बाहर से मुकिंदा का प्रवेश। उम्र लगभग पचपन। मजबूत कद–काठी। घनी मूँछें। गतिविधियों से उसमें वैचारिक परिपक्वता, समझदारी, दिलदारी और त्यागशीलता दिखाई दे रही है। उसने पुरानी शैली का अंगरखा, सादा धोती, सिर पर साफा पहना है, कंधे पर कंबल है। हाथ में छड़ी है। उसे देखते ही सर्जेराव 'राम राम' करता है। वह भी 'राम राम' कहते हुए अपना कंबल और छड़ी खूँटी पर टाँगता है)

मुकिंदा : कब आए नाईक?
सर्जेराव : अभी–अभी आया हूँ।
मुकिंदा : अच्छा हुआ आ गए! (रामू को देखकर) और रामज्या, तू?
रामू : मैं तो ऐसे ही आया था!

(गुणा लोटे में पानी लेकर आती है, उसे लेकर मुकिंदा बाहर जाने लगता है। तभी उसकी नज़र खड़े हुए महादू पर पड़ती है)

मुकिंदा : म्हादबा, बैठिये न!
महादू : जी! (बैठ जाता है। मुकिंदा बाहर जाता है)
रामू : (महादू से) मेरा कहा मान लेते तो क्या तेरी गर्दन नीची हो जाती?
महादू : ए, तू चुपचाप बैठ!

(मुकिंदा हाथ–पैर धोकर लौटता है और दरवाजे के पास लोटा रखता है। गुणा लोटा लेकर भीतर जाने लगती है। उससे कहता है)

मुकिंदा : बेटी, नारू की बीमारी बढ़ती ही जा रही है! येलापूर का एक भला इंसान अब शायद जल्दी ही चल बसे!

(गुणा भीतर जाती है। सर्जेराव की ओर देखकर)

मुकिंदा : हाँ नाईक, बोलिए, कैसे आए थे?
सर्जेराव : मैं यही जानने आया था कि, महीपति ने भरे बाजार में मेरे मल्लू को क्यों मारा?
मुकिंदा : कारण आपको समझना चाहिए था! चलिये, मैं आपसे ही पूछ रहा हूँ कि

महीपति जैसे आदमी ने मल्लू पर हाथ क्यों उठाया? रामोशी और हमारे बीच तो कभी भी दुश्मनी नहीं रही; तो ऐसा क्यों हुआ होगा?

सर्जेराव : आबा, इसतरह टालमटोल वाला जवाब मत दीजिये। आप हमें ही सोचने के लिए कह रहे हैं? हम क्या सोचें? रामोशी तो वैसे भी अल्ला की गाय होते हैं, जिन पर कोई भी छुरी चला दे ...!

महादू : (बीच में ही) हम रामोशी की औलाद हैं...

मुकिंदा : महादू, औलाद वगैरह जैसी भाषा मत बोल!

महादू : क्यों? क्यों न बोलें?

मुकिंदा : मत बोल, क्योंकि रामोशी की औलाद अगर पाँच हथियार रखती है तो दूसरों की औलादों ने भी चूड़ियाँ नहीं पहन रखीं... इसे समझ लो। इस येलापूर में देशमुख और गाँव की दुश्मनी तीन पीढ़ियों से चली आ रही है। लगातार उनमें संघर्ष जारी है। इस साल इस संघर्ष में मैंने भी हथियार उठा लिया है! जिसकी बाजुओं में ताक़त होती है, वही हथियार उठाता है। मगर यहाँ हमारे बीच ताक़त और हथियार का सवाल नहीं है, सवाल नेक औलाद का है!

सर्जेराव : तो साबित कीजिए कि, रामोशी लोगों ने नेकी का रास्ता छोड़ दिया है!

मुकिंदा : देखिये, हाथ कंगन को आरसी क्या! गाँव में अनेक जातियाँ होने के बावजूद नाते–रिश्ते की अपनी जगह होती है! दूर क्यों जाएँ, मैं तुम्हारी माँ को काकी कहता था; दिनू की माँ को तुम भाभी कहते थे! मतलब, हमारे बीच भाई–भाई का रिश्ता हुआ! इस नाते से, मेरी बहू भी तुम्हारी बहू हुई... इसे कहते हैं नाता–रिश्ता! और ये रिश्ता नज़रों में बसा रहता है! मगर अब रामोशी लोगों की नज़रों में वह रिश्ते की वह लाज नहीं बची है! आँखों का पानी मर गया है!

सर्जेराव : (उसे रोकते हुए) आबा, खुलकर बोलिये!

मुकिंदा : तो साफ–साफ सुनो! तुम्हारा मल्लू गोपालराव का जिगरी बनकर, हमारी बहू–बेटियों की इज़्ज़त लेकर हमारे कलेजे के टुकड़े... करना चाहता है! ... इसीलिए महीपति ने उस देशमुख के जिगर पर चोट की है! ...बताओ, क्या हमारी गुणा को छेड़ना नेकी कहलाएगा?

महादू : मगर हमें तो इस बात का पता नहीं चला...

सर्जेराव : (खिन्न होकर) ओह! यह बात मुझे पहले पता चल जाती, तो मैं यहाँ कभी नहीं आता!

मुकिंदा : अच्छा हुआ आ गए... बात का खुलासा तो हो गया; हम भी किसी से बैर नहीं चाहते! बैर की फसल कौन काटना चाहता है?

सर्जेराव : (अपनी थैली से तम्बाकू निकालकर चिलम में भरते हुए) आबा, मल्लू से गलती हो गई, अब आगे रामोशी नेकी के रास्ते पर ही चलेंगे! जो कुछ हुआ, उसके लिए मैं आपसे माफी चाहता हूँ! थोड़े अंगारे चाहिए...

मुकिंदा : (भीतर देखकर) गुणा, बेटी अंगारे ला देना! (गुणा अंगारे लाकर सर्जेराव के सामने रखती है और लौटने लगती है)

सर्जेराव : (जल्दी से) बहूबाई, रूकिये! (गुणा रूक जाती है) सुनिये, ये एकमात्र और पहला अपराध है, जो हम रामोशी लोगों से हुआ है। इसलिए मेरे इस साफे और मूँछों की लाज रखते हुए मुझे माफ कर दीजिये; रामोशी बुरे नहीं हैं!

(बोलते हुए अपने कंधे पर रखे कंबल को आँचल की तरह फैलाकर उस पर अपना सिर रखता है। गुणा जाने लगती है।)

मुकिंदा : नहीं बेटी, रूक जाओ! नाईक, ये क्या कर रहे हो? ऐसा मत करो। उल्टी गंगा मत बहाओ। (गुणा से) बेटी, ससुर बहुओं के पाँव नहीं पड़ते। उनका

सम्मान उन्हें वापस करो!

(गुणा पहले झिझकती है, फिर झुककर सर्जेराव को प्रणाम करती है। सर्जेराव कंबल समेटकर अपनी मूँछें छूता है)

सर्जेराव : आबा! आप विश्वास रखिये, येलापूर के रामोशी आपकी इज़्ज़त के लिए अपना सिर कलम कर देंगे! अब हमें इजाज़त दीजिए!

(कहते हुए उठ खड़े होते हैं। गुणा भीतर जाती है। गोविंदराव भिडे का प्रवेश।)

मुकिंदा : अरे गोविंदराव! आज इधर कैसे राह भटक गए?

गोविंदराव : यहीं आया हूँ। ...देशमुख साहब को रामोशी लोगों की ज़रूरत महसूस हुई इसलिए मैं रामोशी बाड़े में गया था; वहाँ पता चला कि, सब लोग मुकिंदा के घर गए हैं! इसलिए मैं भी यहीं आ गया!

मुकिंदा : मतलब, जिधर आग, उधर हवा! बैठिये!

गोविंदराव : बैठता हूँ! मगर सर्जेराव, ये क्या झमेला है?

सर्जेराव : कैसा झमेला? मल्लू के लिए आया था...

गोविंदराव : ओऽऽहो! अच्छा अच्छा! मगर तू मल्लू को पूछने की बजाय यहाँ क्यों आया है? अरे, जहाँ दर्द हो, वहीं दवा करनी चाहिए न!

मुकिंदा : सच है! मगर जब खुजली के कारण घाव हो जाता है, तब उसकी दवा अलग होती है; वरना घाव और बढ़ जाता है। यह बात रामोशी समझ गए हैं!

गोविंदराव : ठीक है, मगर महीपति मुकिंदा तो नहीं है! महीपति का अपराध...

मुकिंदा : अपराध? महीपति ने कोई अपराध नहीं किया है!

गोविंदराव : नहीं, पर महीपति जैसे बड़े आदमी को गरीब पर हाथ उठाना शोभा नहीं देता!

मुकिंदा : आप इस बारे में कुछ न कहें तो बेहतर होगा! गरीब–मजलूमों के दुख–सुख की बात आप मत कीजिए! एक ओर गरीबों के हितों की बात करना और दूसरी ओर गरीबों की गर्दन मरोड़ना; इसमें आपका हाथ कोई नहीं पकड़ सकता!

गोविंदराव : (उसे रोकते हुए) मुकिंदराव! बेकार की बात मत करो!

मुकिंदा : कैसे? अब कैसे मिर्ची लग गई? गणपतराव देशमुख की हत्या में आपने ही झूठी गवाही देकर, राणूजी के बाप को फाँसी पर चढ़वाया था, ये झूठ है क्या? आप दोनों ने मिलकर गाँव को धमकाकर महीपति पर प्रकरण दर्ज़ कराया, येलापूर इस बात को भूला नहीं है। भले ही रामोशी इस बात को भूल गए हों, मगर येलापूर की माटी इसे कभी नहीं भूलेगी। आपने और देशमुख ने मिलकर गाँव के खलिहान में आग लगा दी और मुझे जेल भिजवाया था! उस समय ये गरीब किसान आप लोगों की हाँ में हाँ मिलाते थे, मगर अब समय बदल चुका है।

गोविंदराव : अच्छा! समय बदल चुका है, मतलब क्या हो गया है?

मुकिंदा : मतलब अब किसान बोलना सीख गए हैं। आप लोगों की अब तूती नहीं बोलती इसलिए क्या आप लोग रामोशी की आड़ लेकर बहू–बेटियों की आबरू से खेलेंगे! ... मगर याद रखिये, अब ऐसा नहीं हो पाएगा! आबरू लूटने वालों को हम सबक सिखाकर रहेंगे! इसमें हमें अपनी जान गँवानी पड़े तो भी परवा नहीं है!

सर्जेराव : भिडेसाहब, मुकिंदा आबा और हम लोगों के बीच बात हो चुकी है। आप बात को क्यों बढ़ा रहे हैं?

गोविंदराव : (हार मानते हुए) मैं क्यों बढाऊँ? मैं सिर्फ यही कह रहा था कि भई, गाँव का मामला है, कोई मज़ाक नहीं है!

मुकिंदा : (शांत होकर) आप ही गाँव को मज़ाक समझते हैं! इसीलिए आप लोगों ने तीन पीढ़ियों से दुश्मनी को हवा–पानी दिया है। अब उस आग को फूँक मार–मारकर गाँव जलाना चाहते हैं? कह रहे हैं, मज़ाक नहीं है! मैं तो कहता हूँ कि येलापूर मज़ाक नहीं, आग है आग...

गोविंदराव : हमने दुश्मनी को और हवा दी? ऐसा तो मत कहिये!

मुकिंदा : मैं तो कहूँगा ही! आपके और गोपालराव के दादा ने गाँव में नाचने वाली को बुलाकर पूरे गाँव को इकट्ठा किया था! लोगों को कर्ज़ देकर, उस औरत को दौलत में डुबा दिया! तमाशा के फड में कोरे कागज़ पर अँगूठा लेकर आधे गाँव को जेल की हवा खिला दी! ...उस नाचने वाली की आय के तीन हिस्से कर आपस में बाँट लिये और आधे गाँव पर तगादा–वसूली–नालिश–जप्ती –मारपीट की बौछार कर दी! इसी बारिश में हमारे बीच दुश्मनी की फसल उग आई थी। ...आप अब उसकी फसल मत काटिये! उसमें अन्याय का पानी और षड्यंत्रों की खाद मत दीजिये! ... वरना ठीक नहीं होगा!

गोविंदराव : क्या होगा? जो होना होगा, होगा! हम अब कानून का ही सहारा लेंगे! उसके लिए जितना पैसा लगेगा, खर्च करेंगे!

मुकिंदा : कीजिये... खर्च कीजिये! लूटा हुआ पैसा खर्च करके फिर दुश्मनी की फसल काटिये! वाह! आदमी को बो कर आदमी उगाइये! (व्यंग्य से) पैसा! आप क्या सोचते हैं कि पैसे से कानून खरीदा जा सकता है! हत्या की जा सकती है! मगर अब वे दिन नहीं रहे! दुनिया, इंसान और कानून, सब बदल गया है। मगर आप...

गोविंदराव : क्या आप...? बोलो... आगे बोलो!

मुकिंदा : जिस तरह कोई बैल कीचड़ में धँस जाता है, वैसे ही आप लोग धँसे हुए हैं! आप लोग बदलने के लिए तैयार ही नहीं हैं! हमेशा आग में घी झोंकने में ही मज़ा आता है आप लोगों को! मगर याद रखिये, एक दिन उसी आग में जल मरेंगे आप लोग!

गोविंदराव : हाँ हाँ, देख लेंगे कौन मरता है! चलो, रामोशियों, चलो!

(झटके से बाहर चला जाता है। रामोशी वहीं रूके रहते हैं।)

सर्जेराव : (थोड़ी देर बाद) आबा, हम जा रहे हैं!

मुकिंदा : (खिन्न होकर) ठीक है, जाइये! (सभी रामोशी जाते हैं। मुकिंदा खिन्न होकर सोच में डूब जाता है। गुणा को पुकार कर) गुणा, दिनू कब आनेवाला है?

गुणा : (दरवाज़े पर आकर) देर होगी, खाने पर इंतज़ार मत करना, कहा है!

मुकिंदा : अच्छा! (रामू की ओर नज़र जाती है) रामू, तू क्यों चुप है?

रामू : मैं क्या बोलूँ? सुन रहा था।

मुकिंदा : सुन रहा था न? वैसे रामू, आज सूरज पश्चिम से निकल आया था! जो भिड़े कभी मुझसे बात तक नहीं करता था, उसने दस साल बाद आज पहली बार मेरे दरवाज़े की दहलीज़ लाँघी है! उसमें यह हिम्मत कैसे पैदा हुई, समझ में नहीं आ रहा है! ऐसा लग रहा है मानो, कोई मुर्दा उठकर बोलने लगा है!

रामू : आबा, एक झमेला हुआ है!

मुकिंदा : झमेला? कैसा झमेला?

रामू : (आवाज बदलकर) आबा, गाँव में नरशा बागी आया है!

मुकिंदा : (आँखें फाड़कर) नरशा? वो डाकू ... और गाँव में? कहाँ है वो?

रामू : हाँ, वही नरशा... गाँव में ... देशमुख की हवेली में रात भर था।
मुकिंदा : तो तू ने सुबह क्यों नहीं बताया?
रामू : मुझे लगा था कि, वो पैसे लेकर चला जाएगा; मगर दोपहर को देखा तो ऊपरी मंज़िल पर मुर्गा खा रहा था!
मुकिंदा : रामू, तू ने नहीं बताकर गलती की! मगर अब तू तुरंत जा, और उस पर नज़र रख! (गुणा भीतर से लोटे में पानी लेकर आती है, उसे देखकर) बेटी, मैं अभी खाना नहीं खाऊँगा! (उसे कारण समझ में नहीं आता, कुछ पूछने के लिए मुँह खोलती है, तभी बताता है) मुझे भूख नहीं है! तुम भीतर जाओ।

(गुणा भौंचक होकर भीतर जाती है)

रामू : तो आबा, मैं जाता हूँ।
मुकिंदा : हाँ, ठीक से जा!

(पांडू नाई और उसकी पत्नी के झगड़े की आवाज़ बाहर सुनाई देती है। पांडू 'अरे, मेरी नाईपेटी तो छोड़' चिल्ला रहा था और उसकी पत्नी 'नहीं छोडूँगी' कह रही थी। दोनों बरामदे में आते हैं।)

पांडू : अरे, छोड़ मेरी नाईपेटी! घरवाली है या कसाई!
काशी : नहीं... नहीं छोडूँगी!
मुकिंदा : रूको... रूको; क्या हुआ?

(काशी मुकिंदा को देखते ही नाईपेटी छोड़ देती है और आँचल लपेट लेती है। गुणा भी बाहर आकर एक ओर खड़ी हो जाती है। रामू आगे बढ़ता है।)

रामू : अरे भाभी, आप इस नाईपेटी का क्या करेंगी? चूल्हा–चौका करने की बजाय अब बाल काटने का शौक चर्राया है क्या?
काशी : (गुस्से से) हाँ हाँ, चर्राया है!
रामू : नहीं, ऐसा मत कीजिए; आपसे रोज पाँच खून हो जाएंगे! और पाँच महीने में इस गाँव में एक भी आदमी नहीं बचेगा!
काशी : देखिये भैया, आप चुप रहिये तो! बेकार के मज़ाक मत कीजिये!
मुकिंदा : मगर हुआ क्या है कासूबाई? ए पांडू, क्यों इस तरह लड़ाई–झगड़े पर उतारू हो गए हो?
गुणा : क्या हुआ कासू? बताओ तो पहले!
रामू : पांडू बोल!
काशी–पांडू : आबा, हुआ ये...
मुकिंदा : कोई एक जन बताओ; दोनों का एक साथ कैसे सुनूँ?
काशी : (आगे बढ़कर) मैं बताती हूँ। ये रोज सबेरे उठकर उस इनामदार का थोबड़ा सहलाने के लिए चले जाते हैं। घर में दो दाने नहीं आ रहे हैं। मुझे खाली पेट रहना पड़ता है!
रामू : मुझे लगता है पांडू, कल से थोबडे सहलाना छोड़कर भैंसों को मूँड़ना शुरु कर; ताकि पेट भर सकें।
काशी : देखिये, आप फिर टाँग अड़ाने लगे! मैं ये नहीं कह रही हूँ कि भैंसों को मूँड़ना चाहिए; मगर रोज उस अकेले देशमुख का थोबड़ा ही क्यों चिकना करते हैं? गाँव के किसान लोग बेचारे अपनी बढ़ी हुई दाढ़ी–मूँछ लेकर हमारे

दरवाज़े पर आते हैं और ये हैं कि, अपना चेहरा छिपाकर भाग जाते हैं, क्या ये सही है?

मुकिंदा : क्यों पांडू, रोज–रोज एक ही आदमी की हजामत करके कैसे काम चलेगा? गाँव–दराज के बाकी लोगों का क्या होगा?

पांडू : आबा, मैंने कब एक की ही...

काशी : अब झूठ मत बोलिये! कल उस देशमुख की तबियत ठीक नहीं थी इसलिए वह पुरानी हवेली में सोया हुआ था, और ये नई हवेली में उसका इंतज़ार करते हुए मुँह बाँए बैठे रहे। जब अंधेरा होने लगा, तब जाकर कहीं लौटे हैं!

मुकिंदा : ये सच है क्या पांडू? (पांडू शरमाता है) फिर तो ये गलत हो रहा है! अरे, जिस तरह धरती पर पहाड़ टिका रहता है, उसी तरह यहाँ गाँव में हरेक आदमी दूसरे के आधार पर टिका रहता है! तू पंढरपूर का विट्ठल है! सबके लिए तेरा व्यवहार एक समान होना चाहिए! रोज देशमुख की हवेली में बैठकर तो तू गाँववालों के प्रति अन्याय करेगा! अपनी जिम्मेदारी का निर्वाह कर! और काशी, तुझे भी इससे इस तरह का झगड़ा नहीं करना चाहिए। पत्नी को भी पति से उचित व्यवहार करना चाहिए!

रामू : इस तरह भालू की तरह नहीं नचाना चाहिए!

मुकिंदा : काशी, भीतर जाओ! पांडू, चिलम वगैरह पीनी है क्या?

पांडू : हाँ हाँ, क्यों नहीं!

मुकिंदा : तो तुझे तंबाकू दूँ? रामजा, तू जा! (रामू जाने लगता है, उसी समय दूर से शोरगुल सुनाई देता है। सभी लोग सुनने की कोशिश करते हैं। दंगे की तरह चीख–पुकार। औरतों के रोने की आवाज़। 'दौड़ो दौड़ो' की पुकारें। मुकिंदा गंभीर होकर गर्दन तानकर देखने की कोशिश करता है।) रामू, जा देख तो! जिस दिन भिडे ने खलिहान जला दिया था, उस दिन भी इसी तरह की चीख–पुकार मची थी!

(तभी घबराए हुए करीम का प्रवेश)

करीम : आबा ऽऽ आबा ऽऽ

मुकिंदा : करीम, क्या हुआ?

करीम : नरशा दारू पी कर, येलापूर में आग लगाता फिर रहा है! जिसको सामने पा रहा है, उसको मार...

गुणा : जिसको देख रहा है, उसको मार रहा है? अरे, गाँव में उसको रोकने वाला कोई नहीं है क्या?

मुकिंदा : बेटी, कौन होगा? जो हैं, उन्होंने ही इस भस्मासुर को खड़ा किया है! रोकने वाला यहाँ कोई नहीं है! खतरा!

गुणा : खतरा! अब क्या होगा?

रामू : अब क्या कर सकते हैं?

करीम : महीपति, दिनकर, राणूजी कहाँ हैं?

मुकिंदा : वे आज गाँव में नहीं हैं, इसीलिए ये भगदड़ शुरु हुई है! (उधर चीख–पुकार जारी है) येलापूर के दुश्मनों ने अवसर ताड़कर ये बलवा किया है!

(जिधर से भगदड़ की आवाज़ें आ रही हैं, उस दिशा में सब लोगों की आँखें और कान लगे हुए हैं। चीख–पुकार बढ़ रही है और धीरे–धीरे आवाज़ नज़दीक आती हुई मालूम दे रही है)

गुणा : अब क्या होगा?

मुकिंदा : आगे क्या होगा, ये अभी कैसे पता चलेगा? मगर... अच्छा ही होगा!

पांडू : तो आबा अब...

मुकिंदा : हाँ, अब हमें कुछ न कुछ करना होगा! पहले तू और करीम, दोनों टालगाँव जाओ। और काशी, तू, गुणा और रामू – तुम तीनों काशी के घर में जाकर रहो। जाओ।

करीम : ठीक है, हम जाते हैं!

मुकिंदा : हाँ, जाओ और महीपति–दिनू–राणू से कहना कि जल्दी आएँ! उनके येलापूर में आग लगी है! वे जल्दी आएँ! जाओ जल्दी, दौड़ो! (करीम और पांडू जल्दी–जल्दी चले जाते हैं। उसके बाद काशी, गुणा और रामू की ओर देखकर) तुम लोग भी जाओ! देर मत करो! साफ दिख रहा है कि यह आग मुकिंदा के घर की ओर आएगी! (आवाज़ बढ़ती जा रही है) और बेटी, (गुणा से) बंदूक कहाँ है?

गुणा : (दुखी होकर) ओह... उसे तो टालगाँव ले गए हैं!

मुकिंदा : ठीक है, कोई बात नहीं! तू काशी के साथ जा!

गुणा : (अचकचाकर) मगर... (झटके से घर के भीतर जाती है)

मुकिंदा : (ऊँची आवाज़ में) बेटी, संकट से बचने का अर्थ हार मानना नहीं होता! पानी छोड़ने से पहले, उसके लिए किनारे बनाना ज़रूरी होता है! राजाराम को रायगड के किले से इसी तरह जाना पड़ा था! रानी को पीछे छोड़कर! तू जा बेटी!

गुणा : (दरवाज़े पर आकर) तो आप भी क्यों नहीं चलते? संकट से बचना है न? तो सभी बचते हैं!

मुकिंदा : मैं? ... मैं कभी संकट से नहीं बच सकता! और सब किला छोड़कर जाने से कैसे काम चलेगा? किसी न किसी को तो लड़ना ही पड़ेगा! जाओ काशी, रामू तुम लोग जाओ! (सब दुखी हृदय से जाने लगते हैं) रूको! ...काशी, मैं अपनी इज़्ज़त ... नहीं नहीं, मुकिंदा की दौलत तुम्हारे आँचल में डाल रहा हूँ। उसे सम्हालना!

काशी : आप चिंता न करें आबा! यह दौलत मैं अपने हृदय से चिपकाकर रखूँगी और सुबह सुरक्षित ला दूँगी!

मुकिंदा : शाब्बास! जाओ! (मुकिंदा के अलावा सब जाते हैं। मुकिंदा गुणा ने दिये हुए लोटे को पास ही रखता है और चिंतामुक्त होकर लंबी साँस छोड़ता है। भगदड़, चीख–पुकार जारी है। पास आ रही है। वातावरण गंभीर होता जाता है। मुकिंदा साफा निकालकर खूँटी पर टाँगता है। थोड़ी देर सोचकर लालटेन की लौ कम करता है। थोड़ा अंधेरा महसूस होता है। कुछ देर बाद दरवाज़ा खटखटाने की आवाज़ आती है। मुकिंदा धमकाते हुए पूछता है)

मुकिंदा : कौन है?

नरशा : (बाहर से) पहले दरवाज़ा खोल... देख कौन आया है!

मुकिंदा : (ऊँची आवाज़ में) कौन है?

नरशा : (बाहर से ऊँची आवाज़ में) मैं हूँ नरशा!

(मुकिंदा आगे बढ़कर दरवाज़ा खोलता है और तेज़ी से पीछे सरक कर स्टेज के बीचोबीच खड़ा हो जाता है। दारू के नशे में चूर नरशा और उसके दो साथी धीरे–धीरे भीतर आते हैं। नरशा लड़खड़ा रहा है। जैसे–तैसे खुद को सम्हालकर बंदूक तानता है)

नरशा : मैं... मैं... नर... शा... बा... गी ...!

मुकिंदा : (व्यंग्य से) आ गया!

नरशा : (घूरकर देखते हुए) हाँ, मैं आ गया हूँ।

मुकिंदा : जल्दी आ गया! थोड़ी देर बाद आता तो...

नरशा : (गर्म होकर) तो... क्या हो ऽऽ ता! तो...

मुकिंदा : तो अभी तक तेरा सिर तेरी गर्दन पर नहीं रहता!

नरशा : ठीक है, तो फिर अपना सिर सम्हाल और अपनी बंदूक दे मुझे! कहाँ है बंदूक?

मुकिंदा : मेरी बंदूक माँगने का अधिकार तुझे किसने दिया?

नरशा : मैं? मैं... नरशा हूँ...

मुकिंदा : झूठ है ये!... तेरे मुँह से देशमुख की दारू बोल रही है, जो मेरी बंदूक माँग रही है! ... तू भाग्यशाली है! ... तेरा नसीब अच्छा है इसलिए येलापूर में कोई नहीं है! नहीं तो हत्यारे, तुझे बंदूक की बजाय बंदूक की गोली ही मिलती!...

नरशा : (दो कदम आगे बढ़ते हुए) सच है! तो चल, अपनी बंदूक निकाल, या फिर मेरी बंदूक का सामना कर! ...(चिल्लाकर) चल जल्दी...!

मुकिंदा : (चिल्लाकर) आगे मत बढ़, वहीं रूक! ... (नरशा हड़बड़ाता है... मगर फिर धीरे–धीरे आगे बढ़ता है)

नरशा : नहीं रूकूँगा...

मुकिंदा : रूक... नहीं तो...

नरशा : (लड़खड़ाकर) नहीं तो क्या? (मुकिंदा तेज़ी से खूँटी से कुल्हाड़ी उतारकर मारने की मुद्रा में आता है। उसका उग्र चेहरा देखकर नरशा चौंककर पीछे सरकता है)

मुकिंदा : मैं ... मैं रोकूँगा तुझे! (कहते हुए कुल्हाड़ी ऊपर उठा लेता है। नरशा विचलित होकर इधर–उधर देखने लगता है)

नरशा : (परेशान होकर) ए, तू रूक, नहीं तो...

मुकिंदा : नहीं तो क्या?

नरशा : मैं गोली चला दूँगा!

मुकिंदा : (शांति से) तू चला गोली! तू ने मेरे घर में कदम रखा, यह गोली चलाने जैसी ही बात है! मगर तू शेर की गुफा में आया है! (ऊँची आवाज़ में) चला गोली, और जाकर बता दे उस गोपाल को, ...कहना कि, गोली का बदला लेने के लिए अब दिनू, महीपति और राणू आएंगे! वे तुझे ज़िंदगी भर सोने नहीं देंगे। और तू... तू... (ताकत लगाकर कुल्हाड़ी मारने के लिए तैयार होता है, उसी समय नरशा सामने से गोली चला देता है। कुल्हाड़ी ऊपर हाथ में ही रह जाती है। मुकिंदा एक हाथ से अपनी छाती को कसकर दबाता है। उसका संतुलन खो जाता है मगर कुल्हाड़ी को सम्हालते हुए सीधे खड़े रहने की कोशिश करता है) जाओ! जाओ और अब मरने की तैयारी करो...

(नरशा हक्काबक्का होकर देखता है)

पहला साथी : (भौंचक्का होकर) अरे नरसू, ये तो खून...

दूसरा साथी : (डर कर) चलो, भागते हैं!

मुकिंदा : कहाँ भागोगे? अब तुम लोग भागकर अपनी जान कैसे बचा पाओगे? ...तुम हत्यारों को अब छिपने की जगह भी नहीं मिलेगी! अब भागो... भाग जाओ! (क्रुद्ध होकर) भागो... (ज़ोर से) जा ऽऽ ओ...!

(नरशा और उसके साथी जल्दी–जल्दी भाग जाते हैं। मुकिंदा धीरे–धीरे लालटेन के पास आता है। लौ तेज़ करता है। लोटे से गट–गट पानी पीता है और कंबल की ओर बढ़ता है, मगर चल नहीं पाता, लड़खड़ा जाता है। कुल्हाड़ी छिटककर गिर जाती है। वह नीचे गिर पड़ता है। सरकते हुए लोटे के पास जाता है, मगर लोटा लुढ़क जाता है और वह मर जाता है। पर्दा बंद होता है।)

अंक तीन

(पहले अंक की तरह देशमुख की हवेली। पूरा दृश्य वही है। मुनीम जी अपनी जगह पर बैठकर गंभीरता के साथ अपने काम में डूबा हुआ है। थोड़ी देर में करीम प्रवेश करता है। वह चिलम निकालकर तंबाकू भरता है।)

करीम : मुनीम जी, मेरा काम हो गया! पुरानी हवेली में झाड़ू देकर घोड़े को खरहरा कर दिया है।

मुनीम जी : ठीक है! मगर रामभाऊ कहाँ है?

करीम : (चिलम को सुलगाते हुए) अच्छा वो ऽऽ?

मुनीम जी : (फूँककर उसकी तीली बुझाते हुए) रूक, पहले जवाब दे, उसके बाद पीना! तंबाकू के नाम पर गांजा पीता है और बिंदास होकर बता देता है कि भैंस को पिल्ला हुआ है! रामू कहाँ है?

करीम : रामू भैंस चराने गया है! वैसे मुनीम जी, मुर्गे पकड़ने से बेहतर है भैंस चराना! ...हमारा नसीब अच्छा था इसीलिए फौजदार साहब यहाँ जल्दी आ गए और उस नरशा का भूत हमारे सिर से टला... गरीब मुर्गों की गर्दन भी बच गई। और मैं सच कहूँ?

मुनीम जी : मतलब अभी तक जो भैंस को पिल्ला हुआ था, कह रहा था, वो झूठ था न?

करीम : नहीं नहीं जी! मैं तो ये कहना चाहता था कि अच्छा हुआ, नरशा जल्दी चला गया! नहीं तो येलापूर में दवा के लिए तक मुर्गे नहीं बचते! उसने बहुत मुर्गे खाए!

मुनीम जी : अरे, मगर अब उसके सब अंडे–पिल्ले बाहर निकलने वाले हैं! (देशमुख दरवाज़े में खड़े होकर नाखून कुतरते हुए खिन्न होकर सुन रहा है। दोनों का ध्यान नहीं है) उसने गाँव के मुर्गे खाकर मुकिंदा का खून किया और लोग कह रहे हैं कि देशमुख ने सुपारी देकर खून करवाया! ...

गोपालराव : (आगे बढ़कर चिल्लाता है) ये झूठ है! मुकिंदा अपनी मौत मरा है; कौन कह रहा है कि मैंने सुपारी देकर मरवाया! क्या मैं इतना कायर हूँ कि दूसरे को मारने के लिए सुपारी दूँ?

मुनीम जी : मालिक! (घबराकर) गाँव वाले कह रहे हैं; मैं... नहीं...!

गोपालराव : गाँव वाले कह रहे हैं? आग लगे इस गाँव को! धूर्त है ये गाँव! नरशा ने जो खून किया, उसका संबंध मुझसे जोड़ने वाले लोग मेरे दुश्मन हैं! वे मुझ पर झूठी तोहमत लगा रहे हैं! मुझसे बदला लेना चाहते हैं!

मुनीम जी : (उसके चेहरे की ओर देखते हुए) जी... सच कह रहे हैं!

गोपालराव : दुनिया में कुछ भी सच नहीं होता! बस, मैं बता रहा हूँ, वही सच है! मुकिंदा अपनी मौत खुद मरा, यही सच है!

मुनीम जी : (सम्हलकर) जी, यही सच है!
गोपालराव : हाँ, मेरी बात ही सच है! और यदि कोई कह रहा है कि मैंने मुकिंदा का खून किया तो फिर उसका भी खून हो जाएगा!
मुनीम जी : (गंभीरता के साथ) स...च है...
गोपालराव : (करीम से) वह राम्या कहाँ है?
करीम : भैंसों को पानी पिलाने ...
गोपालराव : अरे, अँधेरा हो गया है और इस समय जानवरों को पानी पिलाने? नहीं, ये नहीं चलेगा! सब काम समय पर होने चाहिए! समझे?
करीम : जी, जी हाँ!
गोपालराव : मुनीम जी, क्या गाँववालों ने मेरा बहिष्कार कर दिया है?
मुनीम जी : जी हाँ...
रामू : (हड़बड़ाकर आते हुए) मुनीम जी...
गोपालराव : (बीच में ही) ए, भैंसों को पानी पिलाया?
रामू : जी... हाँ... हाँ!
गोपालराव : और पुरानी हवेली में तुलसी को पानी कौन देगा?
रामू : कल मेरी बारी थी, आज करीम की बारी है!
गोपालराव : करीम, तुलसी में पानी दिया?

(उसी समय फौजदार साहब का प्रवेश। उसके शरीर पर सरकारी वर्दी है। उम्र चालीस साल। शरीर लंबा–चौड़ा है। कमर से रिवॉल्वर लटक रही है। उसने गोपालराव का सवाल सुन लिया है।)

फौजदार : (करीम को ऊपर से नीचे तक देखकर) तू करीम मतलब मुसलमान है न?
करीम : जी, मैं कसाई हूँ... कसाई!
फौजदार : समझ गया! मतलब बकरे की गर्दन उड़ानेवाला! क्यों रे? तू कैसे तुलसी में पानी देने वाला था?
करीम : (हड़बड़ाकर) जी, पूछिये न मुनीम जी से! हाँ तो...
मुनीम जी : सच है... हाँ हाँ!
गोपालराव : बात ये है कि ... हाँ...
रामू : मतलब, हाँ... हाँ!
फौजदार : अरे क्या है ये? क्या है हाँ हाँ हाँ?
सब एकसाथ : हाँ हाँ हाँ!
फौजदार : ओ हाँ हाँ! ठीक से बात कीजिए...
गोपालराव : (बात को घुमाने की कोशिश करते हुए) हाँ, मतलब ये कि हमारे यहाँ एक लंगड़ी भैंस है, करीम उसे पानी पिलाता है! ...मतलब, वो जहाँ बैठी होती है, वहीं ले जाकर पिलाता है! समझ गए न?
फौजदार : हाँ हाँ!
मुनीम जी : हाँ हाँ!
रामू : हाँ हाँ!
करीम : हाँ हाँ!
गोपालराव : आप खड़े क्यों हैं, बैठिये न! हमारा गाँव घूम आए? कैसा लगा? फौजदार साहब, आप आ गए इसलिए मेरे जान–माल की रक्षा हो गई!
फौजदार : (बैठता है) सच है! गाँव तो वैसे ठीक–ठाक है! मगर यहाँ का किसान चालाक़ लग रहा है! अभी भिडे की हवेली से आते हुए मैंने कुछ लोगों को देखा... दमदार लग रहे थे!

गोपालराव : लोग? अरे साहब, ये लोग नहीं, शैतान हैं शैतान! वे मेरे खानदान के तीन पीढ़ियों से दुश्मन हैं! वे सब मुझे नीचा दिखाना चाहते हैं! खैर छोड़िये, ये बताइये कि, आपके भोजन की क्या व्यवस्था की जाए?

फौजदार : मैंने भोजन कर लिया है। भिडे आग्रह कर रहे हैं कि मैं उनकी हवेली में ही रहूँ!

गोपालराव : अरे नहीं नहीं। आप यहीं, मेरी हवेली में ही रहिये; क्योंकि मेरी जान को खतरा है ... इसीलिए तो आप आए हैं न! मुनीम जी, चाय बनाइये! और करीम और रामू, तुम लोग भी खाना खाकर आ जाओ! जाओ और जल्दी लौटना! (दोनों का प्रस्थान। मुनीम भीतर जाता है) साहब, इस गाँव के लोग गँवार हैं! कुछ नहीं समझते! अगर आप समझाने की कोशिश करें, तो भी उन पर कोई असर नहीं होगा! लातों के भूत बातों से नहीं मानते!

फौजदार : मगर देशमुख, आपके और गाँववालों के बीच दुश्मनी का कारण क्या है?

गोपालराव : साहब, कारण क्या हो सकता है? ये लोग मूर्ख हैं! आप तो जानते ही हैं कि मूर्खों का मालिक होने की बजाय बुद्धिमानों का सेवक होना बेहतर होता है! मैंने ही मूर्खता की है उनका मालिक बनने की! इन मूर्खों को गलतफहमी हो गई है कि हमने गाँव के लोगों को लूटकर ये सरदेशमुखी हासिल की है! मगर साहब, यह सरासर गलत है। हमने ये देशमुखी जबरिया हासिल नहीं की है! मैं आपको इसकी कथा विस्तार से सुनाता हूँ, सुनेंगे न?

फौजदार : (पसरकर बैठते हुए) हाँ हाँ, सुनाइये!

गोपालराव : (आगे की ओर झुककर) साहब, बहुत पहले... लगभग तीन सौ साल पहले की बात है। हमारे खानदान का पहला व्यक्ति एक संन्यासी था। वह अपने जीवन से ऊबकर सामने के इस पहाड़ पर आ बैठा था! मतलब... वह तपस्या करके ईश्वर–प्राप्ति करना चाहता था! एक दिन मुगलों का सेनापति जुल्फीकार खान राजाराम महाराज का पीछा करते हुए यहाँ आ पहुँचा। उसने इस संन्यासी को देखा और जान से मारने की धमकी देते हुए राजाराम महाराज का ठिकाना पूछा! क्या करता बेचारा संन्यासी? उसने सीधे राजाराम महाराज की छावनी ही मुगलों को दिखा दी! उसके इस काम से खुश होकर, उस मुगल सेनापति ने बहत्तर गाँव की जागीरदारी उसे बहाल कर दी! ये है हमारे घराने का वैभवशाली इतिहास! अब आप ही बताइये, हमें इन मूर्खों को लूटने की क्या ज़रूरत थी?

फौजदार : सच है! मगर ये किसान इतने उद्दंड कैसे हो गए?

गोपालराव : अरे साहब, यही तो समस्या है! ये लोग हाल–फिलहाल तक बहुत गरीब रहे हैं। कोई चूँ–चपड़ नहीं करता था! बिल्कुल इसी जगह (सामने उंगली दिखाकर), यहीं पर ये लोग पिताश्री के सामने एक पाँव पर, दिन–रात, सिर झुकाए खड़े रहते थे! मगर अब यही लोग, मेरा सिर पत्थर से कुचलना चाहते हैं। मैं भी आश्चर्यचकित हूँ कि इन मुर्दों में जान कहाँ से आ गई?

फौजदार : समय बदल गया है और क्या! छोड़िये, अब आपको घबराने की ज़रूरत नहीं है!

गोपालराव : (खुश होकर) जी, अब मैं बिल्कुल बेफ़िक्र हूँ क्योंकि आप खुद यहाँ आ गए हैं। मगर साहब, मुकिंदा के खून का कोई सूत्र या सुराग आपके हाथ लगा क्या?

फौजदार : अभी तक कोई सूत्र या सुराग़ नहीं मिला है! जब तक वो नरशा पकड़ में नहीं आता, तब तक कुछ कह नहीं सकता। देखते हैं...

गोपालराव : पर साहब, इस तरह ढील देंगे तो खून का सुराग़ कैसे ढूँढ़ पाएंगे?

फौजदार : (उसे घूरते हुए) देशमुख, आप निश्चिन्त रहिये। फौजदार की इस वर्दी को चढ़ाये हुए बीस साल हो चुके हैं। इस बीच मैंने कई खूनी प्रकरण निपटाए

हैं। मेरा अनुभव है कि खून सिर चढ़कर बोलता है...

गोपालराव : (घबराकर) मतलब... मुकिंदा का खून सिर चढ़कर बोलेगा?

फौजदार : शत–प्रतिशत। देखना मेरा कमाल! मैं यहीं, आपकी इसी हवेली में बैठे–बैठे खूनी को पकड़कर दिखा दूँगा। सारे सूत्र और सुराग सुलझा दूँगा।

गोपालराव : मतलब... मतलब... हमारी इस हवेली में बैठे–बैठे?

फौजदार : हाँ हाँ, इसी हवेली में... यहीं...

गोपालराव : (अचानक चिढ़ते हुए) आप क्या ये कहना चाहते हैं साहब, कि खून हमने किया है? अगर ऐसा है तो साफ–साफ कहिये।

फौजदार : अरे, ये क्या कह रहे हैं देशमुख? मैं ऐसा कैसे कह सकता हूँ? मैं सिर्फ इतना ही कह रहा हूँ कि मैं यहीं रहकर उस खून के सभी सूत्र सुलझाऊँगा। और सच कहूँ तो सिर्फ नरशा पकड़ में आ जाए! बस, उसके बाद काम खत्म!

गोपालराव : सच है, वाकई नरशा गुंडई पर उतर आया है! अरे, चाय का क्या हुआ? (रसोई की ओर देखकर) मुनीम जी, चाय कहाँ है?

मुनीम जी : (आँखें मलते हुए फूँकनी लेकर बाहर आता है) मालिक, (फूँकनी दिखाते हुए) चूल्हा फूँक रहा हूँ। पानी उबलने लगा है, चाय पत्ती डाल दी है... बस थोड़ी देर में बन ही जाएगी!

फौजदार : (आश्चर्य से) अरे ये क्या? कोई नौकर–चाकर नहीं है आपके यहाँ?

गोपालराव : (खिन्न होकर लंबी साँस भरते हुए) साहब! सब हरामखोर नौकर मुझे छोड़ गए! खाना बनाने वाली बाई को पता नहीं क्या झटका आया, वो अचानक पंढरपूर चली गई! बागान में काम करने वालों ने काम छोड़ दिया, चरवाहों ने जानवरों को चराना छोड़ दिया, धोबी यहाँ कदम नहीं धरता! नाई को थोबड़ा दिखाए पंद्रह दिन हो गए! देखिये न, इसीलिए तो हमारा थोबड़ा बालों के जंगल से घिर गया है! मगर अब आप आ गए है, तो...

फौजदार : (गंभीरता से) तो क्या आप चाहते हैं कि, मैं आपकी दाढ़ी बनाऊँ?

गोपालराव : (दाढ़ी सहलाते हुए) नहीं नहीं, मैं ऐसा कैसे कह सकता हूँ? (मुनीम जी चाय लेकर आता है। चाय का कप हाथ में थामकर फौजदार किसी सोच में डूब जाता है) साहब, किस सोच में डूब गए?

फौजदार : कुछ नहीं! आपकी दाढ़ी के बारे में सोच रहा था!

गोपालराव : अच्छा! तो कोशिश करके देखेंगे क्या?

फौजदार : (भड़ककर) देखिये, भूलिये मत, मैं फौजदार हूँ, नाई नहीं!

गोपालराव : (घबराकर) अरे माफ कीजियेगा, मैं ये बात कैसे भूल सकता हूँ? मगर...

फौजदार : चुप रहिये! ...मैं सोच रहा था कि आपकी हजामत कैसे बनवाई जा सकती है! यह नहीं कि, मैं कैसे करूँगा!

गोपालराव : जी... जी... एक ही बात है! बताइये न, कैसे बनवाई जा सकती है हजामत?

फौजदार : मेरी बात मानिये तो, गाँव के नाई को ही चार आने ज़्यादा दे दीजिये और बनवा लीजिए! मैं अब भिडे की हवेली की ओर जा रहा हूँ।

गोपालराव : ठीक है, जल्दी आइये! मैं भी देखता हूँ नाई क्या कहता है! (दाढ़ी सहलाते हुए) बहुत बढ़ गई है! (फौजदार का प्रस्थान। करीम और रामू का प्रवेश।) रामू–करीम–मुनीम जी इधर आओ!... (तीनों उसके पास जाते हैं) ये देखो, मेरी ये दाढ़ी अभी तुरंत साफ हो जानी चाहिए! (तीनों घबरा जाते हैं) हाँ, होनी तो चाहिए!

मुनीम जी : मालिक, परसो भिडे कह रहे थे कि मेरे हाथों से एक बड़े आदमी का खून होने वाला है!

करीम : और सरकार, मैं तो कसाई ही हूँ! मेरे हाथों को बकरा काटने की आदत है; इसलिए...

रामू : उस्तरा देखने से मुझे तो चक्कर आने लगता है!

गोपालराव : (चिल्लाकर) अरे मूर्खों! तुम लोग मेरी हजामत करो, ये नहीं कह रहा हूँ! मैं तो ये कह रहा हूँ कि उस पांडू नाई को पुचकारकर पकड़ लाओ और वो भी अभी, तुरंत... क्योंकि वह दिन में तो आएगा नहीं! चाहे वह दाढ़ी बनाने के दस रूपये ले ले!

मुनीम जी : हाँ, यह ठीक है!

करीम : जा, जा रामज्या; पांडू को पकड़ ला!...

गोपालराव : हाँ, जा रामू और पांडू को ले आ! ...करीम, तू भी जा उसके साथ! पैसे की खनखनाहट से पत्थर भी बोलने लगता है। जाओ! (दोनों जाते हैं) मुनीमजी, देखो... थोड़ी देर पहले नरशा का आदमी आया था! मैंने उससे कह दिया था कि मुनीम जी गया है पैसा लाने कऱ्हाड, उसके आते ही पैसे भिजवाता हूँ। नरशा एक हजार रूपये के लिए तगादा कर रहा है, इसलिए तुम भीतर ही रूको...!

(मुनीम जी भीतर जाता है। गोपालराव सोच में डूब जाता है। नरशा का साथी प्रवेश करता है। उसे देखते ही गोपालराव चौंक जाता है)

साथी : मुझे नरसू ने भेजा है।

गोपालराव : हाँ, क्या हालचाल है नरसू के?

साथी : पैसे का क्या हुआ? खाना भी चाहिए हमें!

गोपालराव : तू जा! मैं कर रहा हूँ व्यवस्था! और देख, वो फौजदार यहीं है इसलिए इधर बार–बार मत आना! जैसे ही पैसा आएगा, मैं भिजवाता हूँ। भोजन की व्यवस्था किसी हालत में नहीं हो पाएगी! जाओ, जल्दी जाओ, फौजदार आ ही रहा होगा!

(नरसू का साथी तुरंत चला जाता है। मुनीम जी धीरे से बाहर आता है। गोपालराव राहत महसूस करता है)

मुनीम जी : झंझट टली?

गोपालराव : हाँ, फिलहाल टल तो गई लेकिन झंझटें पीछा नहीं छोड़ रही हैं! पता नहीं, मेरा क्या होगा?

(हाथ में लालटेन लेकर गोविंदराव का प्रवेश)

गोविंदराव : कुछ नहीं होगा। आपका कोई बाल–बाँका नहीं कर सकता!

गोपालराव : आइये, आइये! मगर क्या मेरी दाढ़ी कई मील लंबी होने वाली है?

गोविंदराव : (बैठते हुए) मैं तो बता रहा हूँ कि अब कोई झंझट नहीं होगी। मेरा पंचाँग कह रहा है! (जेब से पंचाँग निकालता है) यह पंचाँग कह रहा है कि, आपके शनि और मंगल के बीच जो संघर्ष चल रहा था, वो समाप्त होने जा रहा है! बस आज की रात...

गोपालराव : (खुश होकर) मतलब, कल से सब कुछ ठीक–ठाक हो जाएगा?

गोविंदराव : सौ प्रतिशत! अजी सरकार, अगर यह पंचाँग झूठा साबित हुआ तो इसे यहीं जला दूँगा!

गोपालराव : यह तो खुशी की बात है! गोविंदराव, आपके मुँह से देवता बोल रहे हैं! बहुत अच्छा! (अचानक याद आती है) मगर वो ... वो आपकी जो घिग्घी बँध गई थी... अरे, मेरे सपने में? उसका कुछ पता चला?

गोविंदराव : (घबराकर) हाँ हाँ, चला न! मगर मालिक, अब सब कुछ ठीक होने वाला है!

(करीम–रामू–पांडू का प्रवेश। उन्हें देखकर गोपालराव एकदम खुश हो जाता है)

गोपालराव : (उछलकर) गोविंदराव, गोविंदराव! एकदम सही कह रहे हैं आप! ये देखिये, ये पांडू नाई भी आ गया। पंद्रह दिन इसका अता–पता नहीं था। इसके न आने के कारण मैं जंगली लगने लगा हूँ! रामू पानी ला! गोविंदराव, आप बैठिये, मैं हजामत बनवा लेता हूँ!

(पांडू अपनी नाई–पेटी से सामान बाहर निकालता है और उस्तरे को तैयार करता है। रामू पानी लाता है। गोपालराव पांडू के सामने बैठकर दाढ़ी खुजलाता है। वातावरण एकदम गंभीर हो जाता है। सब लोग खामोशी के साथ देख रहे हैं। पांडू उस्तरा चलाकर एक ओर की दाढ़ी बनाता है। अचानक सीटियाँ बजने लगती हैं। अजीब–सी आवाज़ें सुनाई देती हैं। पांडू घबरा जाता है।)

गोपालराव : (जल्दबाज़ी करते हुए) अरे, उधर ध्यान मत दे! बची हुई हजामत निपटा!

पांडू : (आहट लेकर... काम करते हुए) ये... ये क्या है?

गोपालराव : भूतों की टोली आ रही है देशमुख को निगलने के लिए! तू अपना काम कर! (फिर ज़ोर से शोरगुल होता है। पांडू घबराकर अचानक खड़ा हो जाता है। देशमुख उसे फिर बैठा लेता है) ए, दाढ़ी अधूरी बची है! चल, जल्दी पूरी कर!

मुनीम जी : (घबराते हुए) कौन लोग हैं? देखिये तो गोविंदराव!

गोपालराव : (गंभीरता से) सचमुच ये भूत ही हैं!

पांडू : (एकदम खड़ा होकर अपना सामान पेटी में रखने लगता है) मैं जाता हूँ! मुझे डर लग रहा है। सच में...

गोपालराव : (गिड़गिड़ाते हुए) नहीं नहीं, पांडू! इस तरह उल्टे उस्तरे से मत मूँड! थोड़ी–सी बची है, बस इतनी निपटा दे; बैठ...बैठ!

पांडू : नहीं नहीं! पता नहीं, ये लोग कौन हैं? मुझे डर लग रहा है!

गोपालराव : नहीं रे, ऐसा मत कर! अधूरी...

गोविंदराव : अरे ए, इस तरह अधूरी नहीं छोड़ना चाहिए दाढ़ी!

मुनीम जी : हाँ! अरे पूरा कर, अधूरी दाढ़ी बनाना पाप होता है!

(अजीब आवाज़ें और बढ़ जाती हैं। पांडू नाई–पेटी लेकर भागने लगता है। गोपालराव उसके पीछे भागते हैं। रामू और करीम भी उसे रोकने के लिए उसके पीछे भागते हैं। गोपालराव उदास होकर लौटते हैं)

गोपालराव : (खुद से ही) ओह, ये कितनी बुरी बात है! मेरी... इस येलापूर के इनामदार की कोई इज़्ज़त ही नहीं है! देखिये न गोविंदराव, कैसी बेइज़्ज़ती है! नानासाहेब के पोते की बेइज़्ज़ती हो गई। हाय रे दुर्भाग्य!

गोविंदराव : मालिक, मालिक! बस आज की रात शांत रहिये!

गोपालराव : बस आज की रात? ... फौजदार साहब अब तक क्यों नहीं आए? कब

आएंगे?

गोविंदराव : आ ही रहे होंगे! मैं जाकर उन्हें भेजता हूँ। जाऊँ? बहुत रात हो गई है।

गोपालराव : जाइये, मगर साहब को बोलिये, ज़रा जल्दी आइये! आकर देखें तो इस देशमुख की हालत! (गोविंदराव का प्रस्थान) नहीं... अब मैं इस येलापूर में नहीं रहूँगा! कभी लौटकर भी नहीं आऊँगा! मैं कऱ्हाड चला जाऊँगा!

मुनीम जी : सरकार, इस तरह धीरज खोने से कैसे काम चलेगा? ये समय भी बीत ही जाएगा!

गोपालराव : धीरज? अब मैं धीरज कैसे रक्खूँ? मेरे पास है ही क्या धीरज रखने लायक?

मुनीम जी : सब कुछ है! ... आप देशमुख हैं!

गोपालराव : देशमुख? कैसा देशमुख? मेरी देशमुखी तो कोयला हो गई...!

मुनीम जी : हाँ, ... मगर ये कोयले भी सुलगकर अंगारे बन सकते हैं!

गोपालराव : कोयले अंगारे बन सकते हैं, मगर राख के अंगारे नहीं बनते! राख कभी नहीं सुलगती! (फौजदार का प्रवेश। उसे अपनी अधूरी दाढ़ी दिखाते हुए) साहब, देखिये, ये क्या हुआ?

फौजदार : अरे, ये तो बहुत ही बुरा हुआ! ऐसा लग रहा है कि यहाँ के लोगों ने अच्छे को बुरा और बुरे को अच्छा बनाने का बीड़ा उठा लिया है! मैं तो कभी सपने में भी नहीं सोच सकता था कि, ऐसा हो सकता है!

गोपालराव : बहुत बुरी घटनाएँ घट रही हैं! साहब, देखिये... मेरी... इस देशमुख की... गणपतराव की औलाद की इस तरह दुर्दशा हो रही है!

फौजदार : हाँ, मगर अब दुखी होकर भी क्या होगा? आज की रात शांत रहिये, कल देखते हैं, क्या किया जा सकता है!

गोपालराव : कल? नहीं नहीं! मेरे लिए अब रूकना असंभव है। मैं हाथ पर हाथ धरकर नहीं बैठ सकता! अब मुझे इस गाँव में रहना ही नहीं है। आप मुझे जल्दी से कऱ्हाड पहुँचा दीजिए।

फौजदार : शांत हो जाइये! आधी रात हो चुकी है! सुबह होने दीजिए, उसके बाद देखेंगे!

गोपालराव : नहीं! मैं सूरज उगने का इंतज़ार नहीं कर सकता! मुझे जल्दी ले चलिये।

फौजदार : (शांतिपूर्वक) देशमुख, मैं इस गाँव को अभी नहीं छोड़ सकता! मुझे नरशा की, मुकिंदा के हत्यारे की तफ़्तीश करनी है!

गोपालराव : तो फिर आप मत आइये! मगर मेरे साथ कुछ सिपाही दे दीजियेगा!

फौजदार : नहीं, मैं यह काम भी नहीं कर सकता! इस तरह आधी रात को मैं अपने आदमियों को कहीं नहीं भेज सकता! नरशा ने चारों ओर से रास्ता घेर लिया है। मेरी बात सुनिये, सुबह तक रूक जाइये!

गोपालराव : कैसे रूक जाऊँ? मैं नहीं रूक सकता साहब! (करीम का प्रवेश) करीम, क्या खबर है?

करीम : सरकार, पांडू कहीं नहीं मिला!

गोपालराव : और रामू कहाँ है?

करीम : अंधेरे में हम दोनों एकदूसरे से बिछुड़ गए!

गोपालराव : ओह... एक काम कर! अब तू और मुनीम जी मिलकर पुरानी हवेली में जाकर मेरा सारा ज़रूरी सामान बाँध लो! अभी, तुरंत! अलस्सुबह दो गाड़ियाँ खोजकर लाना! ... हम कल ही येलापूर छोड़ देंगे; जाओ... जल्दी! ठीक है न साहब?

फौजदार : हाँ, ठीक है! कीजिए जाने की तैयारी! जाइये! (मुनीम जी व करीम का प्रस्थान) देशमुख, आदमी के लिए संकट को टालना ही समझदारी है!

गोपालराव : (खिन्न होकर) नहीं साहब! हमने इस तरह कभी संकट को पीठ नहीं दिखाई।

फौजदार : मैं भी तो यही पूछना चाहता हूँ कि, आप इतने बड़े इनामदार हैं, फिर भी आप गाँव छोड़ने के लिए मजबूर हो रहे हैं?

गोपालराव : इसका एकमात्र कारण है, हमारा दबदबा खतम हो गया और लोग हमारे दुश्मन बन गए!

(फौजदार कमर से पट्टा निकालकर अपने गले में डालकर सोफे पर पसर जाता है और सिगरेट–माचिस निकाल लेता है। सिगरेट होंठों से लगाकर माचिस की जलती तीली को देखते हुए फौजदार कहता है)

फौजदार : इनामदार, क्या आप कहना चाहते हैं कि लोगों ने आपसे बेवजह दुश्मनी ठान ली?

गोपालराव : बिल्कुल!

फौजदार : (तीली को फूँक मारकर बुझाते हुए) देखिये, मैंने जब तीली जलाई, तभी तो उसमें लपट पैदा हुई न? सच सच बताइये, आपने अपने दुश्मनों को पैदा किया या दुश्मन अपनेआप पैदा हो गए?

गोपालराव : ये मैं कैसे बता सकता हूँ? एक बात सच है कि, जो पहले हमारे तलवे चाटते थे, वे ही अब हमें ललकारने लगे हैं! मतलब, जो पहले कमज़ोर थे, वे मुँहज़ोर हो गए हैं...

फौजदार : ओह... अब मैं समझा! मतलब जो मुँहज़ोर हो गए, उन्हें कुचलने के लिए आप ज़्यादा क्रूर हो गए और फिर यह विस्फोट हो गया! है न?

गोपालराव : आप जो भी कहिये! अब तो यही सच है कि समुंदर के बीच हमारे जहाज़ में छेद हो गया है और हम संकट में हैं! साहब, आप इस गाँव में कब तक रूकेंगे?

फौजदार : कौन मैं? नरशा का बंदोबस्त करने तक!

गोपालराव : जी, एकदम ठीक! (उठता है) साहब, वो भी मेरा शत्रु है!

फौजदार : (बैठने का इशारा करते हुए) हाँ हाँ!

(रामू दौड़ते हुए आता है)

रामू : मालिक, गाँववालों ने नरशा को घेर लिया है!

गोपालराव : (आश्चर्य से) नरशा को घेर लिया है? कौन–कौन हैं गाँववालों में?

रामू : महीपति, राणू जी, दिनकर आदि ने घेरा है!

फौजदार : मतलब नरशा पकड़ में आ जाएगा?

गोपालराव : ओह... अब क्या होगा? (उसी समय दूर से गोली चलने की आवाज़ आती है। सभी चौंकते हैं। दूसरी बार गोली चलती है। सब लोग जिधर से आवाज़ आ रही है, डरते हुए उधर देखते हैं। फौजदार सजग होकर तुरंत अपना बेल्ट कमर पर कस लेता है) रामू, अब तू भी पुरानी हवेली में जा और सामान बाँधने में मदद कर! जा भाग! अब कुछ भयानक होनेवाला है!

(रामू का प्रस्थान। फिर गोलीबारी होने लगती है। फौजदार आराम से टहलने लगता है। गोपालराव सोफे पर बहुत चिंतित होकर शून्य नज़रों से ताक रहा है। अचानक बहुत ज़ोर से गोली की आवाज़ आती है।)

फौजदार : (चौंककर) देशमुख, सुना आपने? अभी जिस गोली की आवाज़ आई न, वो थ्री नॉट थ्री राइफल की है! इससे अँधेरा भी काँपने लगा है!

गोपालराव : (उठकर खिन्नता के साथ) साहब, वाकई अँधेरा भी काँपने लगा है। वाकई कुछ भयानक घटने वाला है। मुझे लगता है कि आज की रात बहुत ही भयानक है! साहब, येलापूर को इस तरह की अनेक रातों का सामना करना पड़ा हैं। मगर ये तीन रातें... सबसे ज़्यादा भयानक हैं...

फौजदार : (सोफे पर बैठते हुए) कौन सी रातें?

गोपालराव : (सामने झुककर) पहली रात, जब नरशा येलापूर आया! दूसरी, मुकिंदा का खून हुआ, वो रात! और आज... यह तीसरी रात! मुझे तो लग रहा है ... आज की रात तबाही की रात है!

(लगातार गोलीबारी की आवाज़ आती है। गोपालराव और डर जाता है। खुद को सम्हालकर टहलने लगता है।)

फौजदार : सचमुच, तबाही के आसार नज़र आ रहे हैं!

(फिर से गोली चलती है)

गोपालराव : (धीरे–धीरे) लगता है, ये रात बहुत लम्बी है... युगों–युगों तक खत्म न होनेवाली... कत्ल भी इसी तरह जारी रहेंगे ... युगों–युगों तक! पता नही, सुबह कब होगी!

फौजदार : देशमुख, सुबह तो होकर रहेगी! जब दावानल भड़कता है न, तो समूची सूखी–हरी पत्तियों–पौधों को जलाने के बाद ही शांत होता है, उसी तरह ये अँधेरा भी दूर हो जाएगा!

गोपालराव : मगर कब? मैं चाहता हूँ कि जल्दी से सुबह हो जाए! बहुत जल्दी... मैं और इंतज़ार नहीं कर सकता।

फौजदार : यह मुमकिन नहीं है! आप देशमुख हैं मगर सूरज आपका काश्तकार तो नहीं हैं! वह अपने समय पर ही उगेगा! आप जाकर सो जाइये। मैं आपको जगा दूँगा! उसके बाद... (गोलीबारी जारी है)

गोपालराव : (निराश होकर) नहीं, अब मुझे नींद नहीं आ सकती! इस हालत में तो बिल्कुल भी नहीं! गाँव और नरशा, ये दोनों मेरे शत्रु हैं! वे जब लड़ रहे हैं, मुझे नींद कैसे आ सकती है? और साहब, जब परिस्थिति अपने नियंत्रण से बाहर हो जाती है तो ज्वालामुखी फटने का अहसास होता है! इस हालत में कैसे सो सकता है कोई!

फौजदार : आपकी बात सच है! मगर आदमी को हालात से लड़ना ही पड़ता है!

गोपालराव : उसके लिए बहुत बड़े जन–समर्थन की ज़रूरत होती है! यह किसी अकेले के बस की बात नहीं होती! मैं अब निपट अकेला हूँ! मेरे पास इस परिस्थिति से पीछा छुड़ाकर भागने के अलावा कोई विकल्प नहीं है! अब हालात से लड़ने की बात बेमानी हो चुकी है!

फौजदार : मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि आप इतने क्यों डरे हुए हैं? आप देशमुख हैं! आप कहीं भी राजी–खुशी रह सकते हैं! (आहट लेते हुए) देखिये, बाहर गोलीबारी भी बंद हो गई है!

गोपालराव : हाँ, बंद तो हो गई है! ज़रूर कोई न कोई मारा गया होगा! कौन मरा होगा?

फौजदार : कोई भी क्यों न मरा हो, आप अब निश्चिंत रहिये! डरिये मत!

गोपालराव : नहीं, मुझे लग रहा है, मानों मेरे पैरों तले से ज़मीन खिसकती जा रही है!

(उसी समय नरशा दरवाज़े में आकर खड़ा हो जाता है। फौजदार तुरंत मुनीम जी की बैठक के पीछे छिप जाता है। नरशा का समूचा शरीर खून से लथपथ है। उसका साफा खुल गया है। उसके एक पैर का घुटना टूट चुका है। वह ठीक से खड़ा भी नहीं हो पा रहा है। वह बंदूक को ही लाठी की तरह टेककर खड़ा है। उसे देखते ही गोपालराव की सिट्टी–पिट्टी गुम हो जाती है। वह भाग नहीं पाता। उसकी स्थिति पिंजरे में बंद शेर जैसी हो गई है।)

नरशा : (कर्कश आवाज़ में) देशमुख!

गोपालराव : (अचानक पलटकर) कौन नरसू...! तू यहाँ क्यों आया? इस हालत में?

नरशा : कसाई के दरवाज़े पर आया हूँ!

गोपालराव : मगर ... ये तुम्हारे पैर को क्या हुआ?

नरशा : (चिल्लाकर) तेरा पाप मुझे खा गया!

गोपालराव : मतलब? (घबराकर पीछे हटता है) मैं समझा नहीं! सचमुच नहीं समझा!

नरशा : नहीं समझा तो सुन... तूने मुझे दो हजार रूपये देना कबूल करके मुकिंदा का खून करवाया! मैंने तेरी बात मानकर उसका खून कर दिया इसलिए मेरी यह हालत हो गई! मेरा पैर टूट गया... (चिल्लाकर) और मुझे गोली लग गई!

गोपालराव : (थरथर काँपते हुए) अरेरे... बहुत... बुरा... बहुत ...बुरा, मगर तू... तू यहाँ क्यों आया है?

नरशा : (लंगड़ाते हुए सामने आकर) तुझे बताने...! मेरे सिर पर आसमान टूट पड़ा... मुझपर गोलियों की बौछार हुई, मेरे साथी घायल हो गए – यही सब तुझे बताने आया हूँ। (अपना पैर थामते हुए) मेरा पैर टूट गया...

गोपालराव : पैर टूट गया है तो यहाँ क्यों आया?

नरशा : (आँखें फाड़कर) तेरी... तेरी जान लेने ... मैं आया हूँ! खड़ा हो!

गोपालराव : नहीं नहीं! नरसू...मत मार मुझे, मुझे मत मार!

नरशा : नहीं? क्यों नहीं? तूने मुझे फँसाकर येलापूर के जिगर को मरवाया! मैंने इन... इन हाथों से उसे मारा, इसीलिए मेरा पैर टूटा! (पैर दिखाते हुए) मेरी ज़िंदगी बरबाद हो गई (चिल्लाकर) अब तू तैयार हो जा! (कहते हुए नरशा पीछे हटकर बंदूक तानता है। ज़ोर से आवाज़ होती है। गोपालराव ज़ोर से चीखकर नीचे गिर जाता है। फौजदार बैठक की आड़ से ही नरशा पर दो–तीन गोलियाँ चलाता है। नरशा के हाथ से बंदूक नीचे गिर जाती है। वह दो–तीन कदम लड़खड़ाता है और गोपालराव के पास ही गिर जाता है। फौजदार आराम से बाहर निकलता है और जेब से सीटी निकालकर बजाता है। चार सिपाही दौड़ते हुए भीतर आते हैं! गोविंदराव भिडे भागते हुए प्रवेश करता है। वह गोपालराव की लाश देखकर चौंक जाता है)

गोविंदराव : मालिक... मालिक... ये क्या हुआ? (उसका मुँह खुला का खुला रह जाता है और उसकी घिग्घी बँध जाती है। गाँववाले नरशा का पीछा करते हुए आते हैं। फौजदार उन्हें दरवाज़े में ही रोकता है और अपनी टोपी निकालकर कहता है)

फौजदार : खेल खत्म हो गया!

.....

– हिंदी अनुवाद : उषा वैरागकर आठले
अनुवाद सहयोग : अजय आठले
भरत निषाद